







हिन्दी नाट्य-कला

ENGLICENT TO THE TOTAL TELL ENGLISH THE TELL ENGLISH THE

ब्री० पेद्रयास एम० ए०, एल० एल० दी०

्रिन्दी भरत पनस्यको, सहैर

ाश्यः ∫

ल्ह १६३६

्रमृत्य र/ (स्टेंड्स





भूमिका

विशेषतः हिन्दी नाटवक्ता और सामान्यवया सम्यूर्णे भारत-वर्ष को नाटवक्ता से सम्बन्ध रखने वाले निवन्ध इत संग्रह में एक्ष्म किए गए हैं। वर्तमान हिन्दी साहित्य में नाटकों का बहुत महत्त्वपूर्णे स्थान हो गया है। हिन्दी लेपकों में भी नाटकों की लोकपियता बट्ट रही है। पंजाब में हिन्दी साहित्य का आंग विशेष लोकपिय हो रहा है। वसका छुद्र श्रेष स्वर्णीय द्विचेन्द्रताल के अमर नाटकों के हिन्दी अनुवाद को है और कुद्र श्रेष पंजाब चूनिवर्निटों को। पंजाब चूनिवर्निटी की हिन्दी परीकाओं में इम समय नाटक नियुक्त है। इस दान ने नाटकों के महत्त्व को बहुत दहा दिया है।

यह एक विस्तय को पात है कि नाटकों की हननी लोकित्यका के राते भी हिन्दी में नाटच-कला के मन्दन्य की पुस्तकों का लगभग कमाव हो है। जहीं मंनार की कन्य समृद्ध भाषाओं में नाटयकला के सम्बन्ध में सैंकड़ों बमास्पिक पुस्तकें प्रकाशित होती रहती हैं, बहाँ दिन्दी में इस विषय की गिती चुनी पुस्तकें ही प्राप्त होंगी। सम्मन्ता पड़ी कारण है कि बंदाय युनिवर्सिटी हिन्दी



दिन्दी नाट्यक्ला पर स्वभावतः संस्कृत नाटकों का यहुत गह्रस प्रभाव है। यह कहा जाता है कि हिन्दी नाट्यक्ला की दमारत ही संस्कृत नाट्यक्ला की नींव पर खड़ी हुई है। उसके बाद, दिरोजतः बीसवीं सदी को दूमरी द्याव्ही में हिन्दी नाट्यक्ला पर बहाली नाटकों का बहुत भारी प्रभाव पड़ा। बंगाली नाट्यक्ला रोजमपीयर की शैलों में प्रभावित हुई है, खतः उसके हास हिन्दी नाट्यक्ला पर भी रोक्सपीयर की शैलों का प्रभाव पड़ा। खान-कल हिन्दी नाट्यक्ला पर खर्बाचीन यूरोपियन, जिरोपन, खगरेली नाट्यक्ला का प्रभाव पड़ रहा है। इस मंग्रह में मैंने इन मय प्रभागों का वर्णन करने का प्रयत्न किया है।

'भ्रपक का दिशाम' शीर्षक प्रध्याय में भारत में नाट्यकता के विकास के सरदस्य में संलेश से जिया गया है। बादू स्वाससुन्दर दास तथा उनके शिष्य पंज्यीतास्वर दत्त का यह लेख बहुत मत्तेरं क्षक हंगा से जिस्सा गया है। इसके बाद विस्तनाहित्य में नाटक तथा संस्कृत नाटक के सरदस्य में हो प्रस्वाय दिए गए हैं।

दंगाली नाटकों काहिन्दी नाटकों पर जो प्रमाद पहा है, उस को महक्षा में इनकार नहीं किया जा मक्ता । करा प्रीकृष्टिन्त्रज्ञान गय क्या महाकरि गक्षेत्रज्ञाय कीने निय्यात कीर प्रासादिक नियाकों के नाटकों का मंदिय कर्षन इस संबद्ध में देना काह्यक ही था।

मानीन दिन्दी नाटनी के सामन्य में भी भारतेल्यु ही रहिट्टी



गए हैं। पश्चिम भारत के नाटकों खोर खापुनिक भारतीय रंगसंघ पर भी हो मंजिम लेख हिए गए हैं।

नाट्यकला फे सम्बन्ध में अन्य अनेक उपयोगी होतों फे अतिरिक इस संग्रह फे अन्त में रसों के सम्बन्ध में भी श्री अयोध्यासिट उपाध्याय द्वारा लिखिन एक बहुत ही महत्त्वपूर्य होता दिखा गया है। इस होस में रहद्वार रस की महत्ता विदीप रूप से प्रतिपादित की गई है।

इममें मन्देह नहीं कि हमारे पाट्यनम में व्यस्तालना की जरा भी स्थान नहीं देना पाहिए। वाजकल जनना इस सन्वंध में पर्याप्त जागरूक है, यह बात कमिनन्दनीय है। परन्तु मुक्ते भय है कि कहीं इसी उत्साह में हम लीग दूसरे किनारे पर न पहुँच जायें। हमें व्यर्शिलना कौर मुन्द्रता में ग्रेंशरूपन और शिष्ट रद्धार में नथा वासना कौर निष्काम प्रेम में बन्दर करना चाहिए। इन सब को एक ही तराजू पर तीलना साहित्य की हत्या उत्तना होना।

में दन सम्पूर्ण दिशान लेखकों का कृत्या है, जिनके लेकों का सार इस संबद में दिया गया है। सुके खारत है कि इस संबद्ध का महाचित खादर होगा।

शरीन्सम्म रिट्रोट, फ्रिमचा } १२ मितम्दर १६३७)

देवजान



हिन्दी नाट्य-कला

_- % __

रत्या हा विकास

(बाम् ग्याससन्दरदानः)

पीर्ज-मनुष्य की प्राथमिक शिक्ष का प्रायस कनुकरण है।

देर कनुकरण मनुष्य की भाषा, उसके देश और स्वकार की

दिखा के निये करियार्थ साथा है। यह साथन केवल सनुष्यों के

तिथे ही नहीं कर्म काया कीही के द्याद्यार के लिये भी कार्यक्ष है। इसी कनुकरण की सामान्य प्रकृति, कृत परिमालिक और

समुस्त्र होकर, सामाक के कामान्यय प्रकृति, कृत परिमालिक और

समुस्त्र होकर, सामाक के कामान्यय प्रकृति, केवल प्राप्त हक ही

विशिक्ष हो कार्य है और कावा होन्य कियो निर्देश कार्यों की

क्यांकि करना क्यार सीव अलग करना होगा है। पर्य कामान्यय

व्यक्तियों के स्वाप्तों से यह बाये जारि है। सामान्य कीनों के

सनुकरण को रहेश को हो है। इसका होगा केवल सेन्य हो।

केवलायी से है। किन्य नाप्त-प्रदेशकार्यों का कार्य है। इस



जिसमें खमिनय करने वाजा किसी के रूप, हाव-भाव, वेरा-मूपा, योजवाज आदि का ऐसा अच्छा अनुकरण करे कि उसका और वाल्तिक व्यक्ति का मेर प्रत्यज्ञ न हो सके। अब इस अर्थ में साधारणजः 'नाटक' रावद का प्रयोग होना है। यह रावद संस्कृत की 'नट' धातु से बना है जिसका अर्थ सात्विक भावों का प्रदर्शन है। भिन्न भिन्न देशों में इस कजा का विकास भिन्न-भिन्न रुपों और समयों में हुआ है। परन्तु एक यान जो सभी नाटकों में समान रूप से पाई जाती है वह यह है कि सभी नाटकों में पान नाटक के द्वारा किसी न किसी व्यक्ति के व्यापारों का अनुकरण या उनकी नकत करने है।

उत्पति—मनुष्य स्वभाव से ही ऐसा जीव है जो सदा यह चाइता है कि में अपने भाव और विचार दूसरों पर प्रकट करें। वह उन्हें अपने अन्तरकरण में द्विपा रखने में अनमर्थ हैं। वने विचा उन्हें दूसरों पर प्रकट किये चैन नहीं मिलता। अनण्य अपने भावों और विचारों को दूसरों पर प्रकट करने की इच्छा मानव-प्रवृत्ति का एक अनिवार्य गुण हैं। मनुष्य अपने भावों और विचारों को इहितों या वाणी द्वारा अववा दोनों की सहायता से प्रकट करता है। भावों और विचारों को अभिन्यखित करने की ये शिवर्या वह इन्हों भावों को नाय-गा कर प्रकट करता है। इसी इसव के समय वह इन्हों भावों को नाय-गा कर प्रकट करता है। वाणी और इंगिन के अतिरिक्त भावों और विचारों के अभिन्यखन का एक वीसरा प्रकार अनुकरण या नकत है। वाल्यावस्था से ही

A.1.

प्राप्त हुआ है, इन ज्ञानियों ने भी रूपका के संतीत, मुल्य, भाव-संती, देत-भूषा कादि सिम-सित व्यवस्थ नहीं र इपरोत्ती की में दि या कार्यवन्ता आदि के अनुतार भीड़ा घृत परिवर्तन की स्थारिकांत नहीं उन्ने उनके अनेक मेहीं और उपसेहीं की सृष्टि वर दानी है। परस्तु रूपक वास्त्व में उसी स्थार स्पित्त के चौनांत ज्ञा काला है कर इसमें विस्ती के ज्ञानुदरस्य या सकत में साथ ही साथ वर्षोपकथन या दार्लालान भी हो जाता है। रूपक में संतीत या देश-भूषा आदि वर स्थान दसके पीड़े ज्ञाना है। साथ ही हमें दस पत्त वर्षा अपन भी रसना वर्षोद्य काला है। साथ ही हमें दस पत्त वर्षा काला भी रसना वर्षोद्य कि स्वर्ष की सुष्टि स्मीति



होते थे। इन देवताओं में से कुछ तो कल्पित होते थे और कुछ ऐसे वीर-पूर्वज होते थे, जिनमें किसी देवता की कल्पना कर ली जाती थी। ऐसी दशा में इन देवताओं के जीवन में से रूपक की ययेष्ट सामग्री निकल खाती थी। इसी प्रकार के उत्सव खोर रूपके बरमा श्रौर जापान श्रादि में भी हुश्चा करते थे। फसत हो चुकने पर तो ऐसे उत्सव श्रोर रूपक होते ही थे, पर कहीं कहीं फसल धोने के सनय भी इसी प्रकार के उत्सव श्रीर रूपक हुआ। करते धे। इन उत्सवों पर देवनाओं से इस बात की प्रार्थना की जाती थी कि लेतों में यथेष्ट धन-धान्य उत्यन्न हो। भारत में तो खब तक फसलों के मन्वत्य में अनेक प्रकार के पूजन और उत्सव आदि प्रचलित हैं, जिनमें से होनी का त्योहार मुख्य है। यह त्योहार गेहूँ खादि की फसल हो जाने पर होना है और उसी से सन्दन्य रखता है। अब भी होती के अबसर पर इस देश में नृत्य, गीत श्रादि के साथ साथ स्वांग निकतने हैं, जो वास्तव में रूपक के पूर्व रूप ही हैं ! यद्यपि धाजकल यह इत्सव । श्ररतीलता के संयोग से विज्ञान भए हो गया है, पर इससे हमारे कथन की पुष्टि में कोई दाघा नहीं पड़ती।

वीर-पूजा-प्राचीन काल में जिस प्रकार धन-पान्य कादि के लिये देवनाओं का पूजन होता था, उसी प्रकार पूर्वजी और पड़े २ ऐतिहासिक पुरुषों का भी पूजन होता था। उन पूर्वजी-और ऐतिहासिक पुरुषों के उपलस्न में यहे-बड़े उत्सव भी होते थे, जिनमें इन उत्सवों में



बहुत मिलद्व है। चहते हैं कि हजरत दाजद भी ईसा मसीह के सामने नापते थे। किसी माननीय और प्रतिष्टित श्रभ्यागत के चादर के जिये नृत्य-गीत का खायोजन करने की प्रया जब उक सभ्य और घसम्य सभी जातियों में प्रचतित है। प्राचीन खाल में जब बोड़ा लोग विजय प्राप्त करके लीटते थे. तब वे स्वयं भी नाचते । ते ६ और उनका मतकार करने ने लिपे नगर-निकासी भा उनके सामने जाहर नाचने-गाने हे अभी अभी ऐसा भी होता ६ कि युद्धानेत्र में दौर बोद्धा लग की हत्य करके द्याते । उत्तर त्रथी का राज्य भी नन्य राज्य के उन उत्सवी के सन्द हुनः करता या स्वदा और विशेषत वीर स्वती के बर इसे सामन की ग्राह्मधा चीन कपान चारि आसे शहरी बे दर्शानन प्रात्में दोन्द्रा देश नामिन्द्र दुवे के निवे हमेह इक्रा के क्वा मनकर क्या उन्हार प्रमुख्य समीन दस दे रायस के क्य रिजापती के माज़ माज़ सका सकाया अने प्रतीय नहरी का बाद्रम्भ दृश्य मध्या से त्रसारी क्राफि पम द्वारा का संवर्धी क्या तरह के सदद अभि अभि के जुनर जा रहत है। असे से उ स्पेर का द्वार संस्कृति के बारसारण जिल्लाका रूप के रूप विकास है। कि armizen errespelliket in 1994 e 97 sumasum un maio il usa il s 7 - A 873 ROUGH STRIP OF HE NOTESTATES क्रम्या । विभिन्न हे । २०५६ मा २०५४ मा मध्य राजा र दर दिसी त दिसा ने स्टाइक एक खाइ कार साहित्य सम्बन्ध रखना है। एस सन्य राय बड़े बढ़ दबसम्बर्ध से हन्या







नाचने-नाते का मारा काम सियाँ ही करती हैं, पर रामायटा के नाटक में फेवल पुरुष ही माग लेते हैं, उसमें कोई स्त्री नहीं सम्मिलित होने पाती ।

भारतीय नाट्य-साहित्य की मृष्टि-यह तो हुई नाट्य की ठेठ बल्पीच और विदास थी पात । सब हम संदोप में यह षउताना चाइते हैं कि संसार के भिन्न भिन्न देशों में उनके नाट्य-माहित्य को सृष्टि छव छोर कैसे हुई। यह तो एक स्वटः सिद्ध बात है। हि साट्य की वत्सीत गीति-काव्यों बीर क्योरक्यन से हुई । श्रद यदि हमें यह लाउ हो जाय कि इन गीवि-राज्यों श्रीर क्योपकरकों का आरम्भ सबसे पहले किस देश में हुआ, वो हमें अनावास ही प्रमाया निल जावगा कि संसार के किस देश में चय से पहले नाट्य-क्ला की सृष्टि हुई। इस दृष्टि से देखते हुए चेवल हमें ही नहीं बरन संसार के ऋनेक बड़े बड़े विद्वानों को भी विवश होकर यही मानना पहुना है कि इहाँ भारतवर्ष और अनेक बातों में आदिन्दर्चा और पध-प्रदर्शद था. वहां हरहों, गीति-राज्यों श्रीर क्योपरूपन संदन्धी साहित्य उत्पन्न करने में भी वह प्रयम और अपनामं दा। भारतीयों हा पर परान्तत विदान है कि बचा ने देहों से सार लेकर नाटक की सुष्टि की थी । बास्तदिक बात यह है कि नाटक के मृत-नाल, जो समय पाबर नाटक के रूप में विक्रांति हो जाते हैं, वेहीं में स्पष्ट रूप से पाए जाते हैं। हमारे देर संसार का सबसे प्राचीन साहित्य हैं। इनमें भी सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण तथा प्राचीन ऋष्वेत् है।

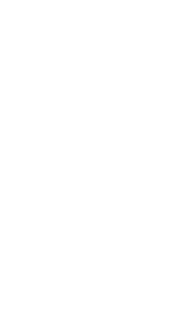


ये येवल नाट्य को क्षिम प्रकार ग्रीड़ सकते थे। आहीं तक समस्य या, वर्टी तक सीध-तान करके रिकार ने अपनी क्षीर से यह सिद्ध करना बारा कि भारत में स्पक्ती को सृष्टि बहुत पीते हुई। यर किर भी तमने भारतीय नाटको की सृष्टि का कोई समय कि गान नहीं किया है, ब्रीट करता में एन प्रकार से यह बात या मान तो कि पाणिकि बीट प्रकार के समय तक भारत में सन्दर्भ के दर्श दिवस हो पढ़ थे। जा दिवारमान प्रदर्भ स्था के साथ भवत है के राज्य महात्र के ने काल दिवार या अके तह है के राज्य महात्र के ने काल दिवार या अके तह है के राज्य महात्र के ने काल दिवार या के कह है के राज्य महात्र के स्थान है कि राज्य के है जिस के साथ के के ब्रीट के समय मानदान के स्थान के है जिस के साथ के स्थान के समय मानदान के समय मानदान

. . .

3 -

estimation.



जड्मित साधुद्धों का उल्लेख करते हुये एक साधु की कथा दी है। एक बार एक साधु कड़ी से बहुत देर कर के आया। गुरु के पृछने पर उसने कहा कि मार्ग में नटों का नाटक हो रहा था, वही देखने के लिये में टर्र गया था। नुरु ने बहा कि साधुओं को नटों के नाटक प्यादि नहीं देखने चाहिएँ। कुछ दिन पीछे उस साधु को एक दार फिर धपने चाधन को स्नाने में विजन्य हो गया ।इस दार गुरु के पूछने पर उसने कहा कि एक स्थान पर नटियों का नाटक हो रहा या, में बड़ी देखने लग गया था। गुरु ने वहा कि हुम बड़े जड़तुद्धि हो । तुन्हें इतनी भी समक नहीं कि जिसे नटों फा नाटक इंसने के लिये नियंव किया जाय, उसके लिये नटियों का नाटक देयना भी निषिद्ध है। इन सर बार्टी के बल्देस से हमारा यही नात्पर्व है वि ब्याञ से लगभग टाई-बीन हज़ार वर्ष पहले भी। इस देश में ऐसे ऐसे नाटक होते थे, जिन्हें सर्वसाधारया बहुत सद्ज में चौर प्रायः देखा करते थे । क्रोबेररम्भाभिसार सरीखे नाटकों का श्राभिनय करना जिनमें पैलान के द्वाप दिन्याये आते हों और ऐसी रहारालाएँ बनाना जिनमें राजा रथ पर छाते. और आहार-नार्ग में जाने हों (दें० विक्रमीवेरीय) महज नहीं है। नाट्य-पता की इन्तति भी इस सीमा तह पहुँचने में मैक्ड़ों इलागें वर्ष लगे होंगे। **पॅरियरम्मामिसार पे संबंध ने हरिबंश पुराया में लिया है कि इस**में प्रयुक्त ने नल-कृदर का. शूर ने रावण का. सांव ने दिदृषक का, गर ने परिपार्श्व का धीर मनोबनी ने रम्भा का रूप पारण किया या और सारे नाउक का अभिनय इतनी उत्तनता के साथ किया गया था कि इसे देख कर सजनाभ छादि दानव बहुत ही। प्रसन्न







े हैं, हितकारी उपरेशों को देनेवाला है धीर पैर्य, कीड़ा खीर सुख र काहि उत्पन्न करने वाला है, १—७६ (*)

"हाशित, ऋसमये जोकार्च तया तपस्थियों को भी समय पर सांति प्रशान वरनेवाला यह नाट्य मेते यताया है, १—००।"

"यह नाट्य पर्म, यश, चायु की कृदि करने बाता, साम करने बाला, सुद्धि बड़ाने वाल कॉर मंनार की उरदेश देने बाला कोगा, १--२१।"

"न बोर्ट ऐसा येह है, न जित्य है, न दिया है, न बला है, न बोग है, न बर्म है जो इस नाट्य में नहीं हिसाया जा सबना, ६— वा ।"

1

ţ

ेया जारप देर दिया, रिन्ट्सनम्म क्यांगलः का स्वयस्य क्यांग्रेक्षण नमा संगर में विशेष करने वाला होता, र्-स्ट्री

हर्युत रिरंपन में स्पष्ट है हि आसीय नास्त हा कार्या देवल क्रमा की पित्तकृति की जार्यातत करना तथा उनकी होंद्र रिक्सा की हर्मिल्ड करना नहीं यान धर्म, चांतु कीर या की हिंद करना है। आसीर नाच्य-पास तथा नास्त-साहित्य की या शिवारत है।

कड्युटरी हा नाम-घराम मार्थ में सामार में ग्राह की है। बात का तिरेक्त काम पाने हैं जिसमें मार्थों की डाप्टेल्स कींग्र कर्य मार्थिय मार्थ तीर्थ प्रयाग कोने की संस्थान है। ब्याहीं में से बहुती ने कड्युटर्श का नाम रेस्ट होगा। अस्तर के लिये हुटिया, हुकती बींग सुक्रिका



है, हितकारी उपदेशों को देनेशला है और पैर्य, फीड़ा श्रीर सुख श्रादि उत्पन्न करने वाला है, १--७६।"

"हु:खित, श्रसमर्थ शोकार्त्त तथा तपस्वियों को भी समय पर शांति प्रदान करनेवाला यह माट्य मेंने बनाया है, १—८०।"

"यह नाट्य धर्म, यरा, आयु की वृद्धि करने वाला, लाभ करने वाला, युद्धि बड़ाने वाला और संसार को उपदेश देने वाला होगा, १—=१।"

"न कोई ऐसा बेर है, न शिल्प है, न विद्या है, न कला है, न बोग है, न कर्म है जो इस नाट्य में नहीं दिखाया जा सकता, १—=२।"

'यह नाट्य वेद, विद्या, इतिहास तथा ऋषेशास्त्र का स्मरण करानेवाला तथा संसार में विनोद करने वाला होगा, १—व्ह ।"

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भारतीय नाट्य का आदर्श केवज अनना की चित्तवृत्ति को श्रानन्दित करना तथा उनकी इंद्रिय-तिप्सा को उत्तेजित करना नहीं वरन् धर्म, आयु श्रीर यश की वृद्धि करना है। भारतीय नाट्य-शास्त्र तथा नाट्य-साहित्य की यही विरोपता है।

कठपुतली का नाच-श्रव हम रूपकों के सम्बन्ध में एक और धान का विवेचन करना चाहते हैं जिनसे रूपकों की प्राचीनता और उनके आरम्भिक रूप पर त्रिरोप प्रकार पड़ने की संभावना है। पाठकों में से बहुतों ने कठपुतली का नाच देला होगा। संस्कृत में कठपुतली के लिये पुत्रिका, पुचली और पुचलिका











बद्ध विवरण नहीं दिया जा सकता । उसका कमबद्ध इटिहास प्रायः प्रसिद्ध मरत सुनि के समय से हो मिलता है। पर यहाँ इस यात का ध्यान रखना चाहिए कि भाव <u>स</u>नि ने जो नाट्य-शा**ख** लिखा है, वह नाटक का लच्या-प्रन्य है और वह भी कई लच्चा-प्रन्यों के अनन्तर तिखा गया है। यह तो स्वष्ट ही है कि नाटक-संदन्यी लक्षण-प्रन्य उसी समय लिखे गये होंगे. जब देश में नाटकों खीर नाट्य-क्ला का पूर्ण प्रचार हो चुका होगा क्योंकि अनेक नाटकों को रंगमंच पर देखे ध्रधवा पड़े दिना न तो उनके गुणदोघों का विवेचन हो सकता था और न उनके सन्दन्य में तत्त्रण-प्रत्य ही दन सक्ते थे। भरत को कालिदास तक ने आचार्य और माननीय माना है। श्रनेक प्रमाणों से यह वात सिद्ध हो चुको है कि भरत का समय ईसा से कम से कम तीन चार सौ वर्ष पहले का तो अवस्य हो है, इससे और पहले चाहे जितना हो। कौटिल्प के अर्थ-शास में नाटकों खोर रंगशालाओं का जो वर्णन मितवा है उससे भी बड़ी सिद्ध होता है कि इस समय इस देश में नाटकों का पूर्व प्रचार या और बहुन से लोग नट का काम करने थे। अर्थ-शाख का समय भी ईसा से कम से कम तीन सो वर्ष पहले का है। प्राय: दसी समय के लगभग भरत मुनि ने नाट्य-शाख की भी रचना की थी। नाट्य-शाख के आरम्भ में कहा गया है कि एक दार वैदस्वन मनु के दूसरे युग में लोग वहुत दुखित हुए। इस पर इन्द्र नया दूसरे देवताओं ने जाहर ब्रह्मा से प्रार्थना की कि आप मती-विनोद का कोई ऐसा साधन उत्पन्न कीजिए, जिससे शुद्रों तक का विच प्रसन्न हो सके। इस पर ब्रह्मा ने वारों वेहीं को दुसावा







नागानंद कादि नाटक हैं। शूद्रक का मृच्छकटिक नाटक भी बहुत श्रन्द्रा है, पर चड्ते हैं कि वह भास के दरिद्रचारुट्स के श्राघार पर लिखा गया है। इनके पीछे के नाटककारों में भवभूति हुए जो कन्नोज के राजा यशोवर्मन् के ब्याश्रित ये खोर जिनका समय साववीं शवादरी का व्यन्तिम भाग भाना जाता है। इनके रचित महावीरचरित, उत्तर-रामचरित श्रीर मालतीमाघव नाटक यहत प्रमिद्ध हैं। इनके उपरांत नत्री शताब्दी के मध्यमें भट्ट नारायण ने वेगीसंदार श्रीर विशासद्त ने मुझराइस की रचना की थी। न्धीं शहाद्दी के घटन में राजशेयर ने क्र्यूरमंत्ररी, बालरामायण घोर याल भारत घारि नाटक रचे थे घोर ग्यारहवीं राताब्दी में शुम्मामिश्र ने प्रबोध-चन्द्रोदय नाटक की रचना की थी। दसवीं राताब्दी में धनंत्रय ने दशरूपक नामक प्रमिद्ध लव्या-प्रम्थ भी तिसा, जिसमें नाटक की क्या-बस्तु, नायक, पात्र, क्योपक्यम षादि का पहन बच्छा दिवेचन किया गया है।

ईसवी इसवी या ग्यास्त्वी शताब्दी तक तो संस्कृत म बहुत भन्दो-अन्दो ताटकों की रचना होती गही, पर इसके उपरांत संस्कृत नाटकों का पतन-काल आरम्भ हुआ। इसके अनत्वर जो नटक बने ये नट्य-कला की हिए से उनने अन्दो नहीं है, जिनने अन्दो उनसे पहने के बने हुए नाटक है। इसी निये हम उनका कोई उन्होस म करके दूसरी बात पर विचार करना पाइते हैं।

भारतीय नाट्य-कता पर पृतानी प्रनाव-चंन्छत के



व्यधिक से व्यधिक फेबल यही सूचित होता है कि जिस समय हमारे यहाँ के खरहे-खरहे नाटक वने थे उस समय यवनों खीर शकों फे साय हमारा सम्बन्ध हो चुका था। तीसरी बात यह है कि भारतीय ध्वीर यूनानी नाटकों के तत्वों में श्वाकाश श्रीर पाताल का अन्तर है। इमारे यहाँ करुण (Tragic) श्रीर हास्य (Comic) का कोई फगड़ा ही नहीं है। हमारे सभी नाटक लोकानन्दकारी होते थे खोर हमारे वहाँ रद्भमध्य पर हत्या, युद्ध ष्मादि फे रहय दिखलाना विजित था। यूनानी नाटकों में फेइल चरित्र-चित्रण की ही प्रधानता है, पर हमारे यहाँ प्राकृतिक शोभा के वर्णन श्रीर रसों की प्रधानता मानी गई है। विक्रमोर्ब-शीय का व्यारम्भ ही हिमालय के विशाल प्राष्ट्रतिक हरय से होता है। उत्तर-रामचरिन छोर शहुन्तला में भी प्राष्ट्रतिक शोभा फे ही वर्णन हैं। यृनानी नाटक बहुधा खुत्रे मैदानों में हुआ करने थे, खयता ऐसे खवाड़ों खादि में हुआ करते थे। जिनमें। खौर भी ष्पनेक प्रकार के रोल-नमारी होते थे। पर भारतीय नाटक एक विरोप प्रकार की बनी हुई रद्वशालाओं में होते थे । नारांश यह है कि फदाचित् एक भी बात ऐसी नहीं है जो जूनानी स्त्रीर भारतीय नाटकों में समान रूप से पाई जाती हो। हों, दोनों में धन्तर पहुत श्रिषक श्रीर प्रत्यस है, श्रीर फिर मय में यही यात यह है कि नाटक की रचना करना अविभा का काम है और अविभा क्सी किसी की नकल नहीं करती। वह जो हुछ करती है, ध्रापसे षाप, सर्वया स्वतन्त्र रूप से करती है।

n. * : - : .









उनके खनुकरण पर स्रोर स्रोर देशों में जो नाटक वने वे प्रायः दुःखांत ही थे।

यग्रपि चे अजा-गीत चुरोप के श्राधुनिक करुण नाटकों के मुल रूप हैं, तथापि यूनान में वास्तविक करूण नाटकों का आरंभ महाकवि होमर के इंलियह महाकाव्य की रचना के ध्रनंतर हुआ था। पहले नो देवनाओं के समने केंद्रल नृत्य और गीन होते थे, वर पीछे से उनमें सवाद या कथीपकथन भी मिला दिया गया था। गायको का प्रधान एक मच पर खड़ा हो जाता या खाँर रोप गायकी षे साथ उसका कुछ कथोपकथन होना था, पर इस कथोपकथन का मुल सभवत सहाक्षत्रि हासर का इंलियड सहाकांच्य था । पहले शहरों में कुछ भिष्यमंगे इंलियड महाकाव्य के इधर-उधर के श्रश गाने फिरन ये जा लोगों हा बहत पसद आते ये श्रीर जिसका प्रचारशीय हो बटन बटुगयाया उद्घ दिनो के अननर धार्मिक उत्सवा पर अज्ञानांती के साथ साथ इतियह के अब सा नाग जाने लगे। इस प्रकार अज्ञा-नीती और है जयह-राप्त के सवान से युन से में नाटय-रुला का बोज रंपरा तथा स्वरीर रात और नृत्य से क्योबस्थन के सिल क्रांच पर न इंग्रास्त छ पने वेश-सूपा श्रीर भाव-भगो के श्राविधिक र एउन है। उन उनरी बन की क्सर रह जाता हो

इस प्रश्नात सहको का स्थात जाता का इस्तात प्रीक्षेत्रीर नाटय-कला का विकास होते २०० चार जाता उन्नत नवीनता स्थयवा विशेषता लाग लगा अति होता स्थात या उसी वर्ष पूर्व धेस्पिम नामक एक ज्वानी कवि हुआ था जिसम प्रनान में सबसे



की यो और उनमें अपने बनाए कुद्ध नए गीत मिलाए थे। इसके टबरांत मेरमन, टालिनस चादि कई व्यक्तियों ने उसमें हुद्ध और मुधार तथा परिवर्तन किए। परंतु वे इप्न्यरस-प्रधान गीत और नाटक युनानियों को पसंद नहीं आए । युनान में प्रायः निकंदर के समय तह करणा माटकों की ही प्राप्तना रही तथा हास्य-नाइको का पतना अधिक प्रचार न *हो सक*ा उन दिनों उन हास्य न इसाम अया चीबीम रायक हुआ करते । और पानी का प्रवेश रा २ कारक्यत और परित्म परी सा त्या करता है। प्रवाहर कारचा सापन नाहको से सहन तेवित किसा <mark>वीराशिह</mark>र, ৯১ বছ মতে, যাজে হালেছ সালনাৰুল্ভ বৰাজী কৰে របស់ សមាស្ត្រ នគស់ សំខាន្តសម្បាធ្ ala in commençate garante e New againg of agreement the little group of the ing the arms and a contract of the र इ.स.च्या र o a are traj s



कारण कदाचित यही था कि प्राचीन काल में प्राय: सभी देशों में श्रमिनेता और नट फ़ुद्ध उपेच्। की दृष्टि से देखें जाते थे। रोम के लोग विजेता थे, इसलिए वे श्रभिनय श्रादि के लिये श्रपने दासों को शिक्षा देकर तैयार किया करते थे। रोम की सभ्यता श्रोर वल की वृद्धि के साथ ही साथ वहाँ नाटकों की भी खुब उन्नति हुई थीं । पर ईसा की चौधी शताब्दी के मध्य में जब ईसाई पादरियों का जोर बहुत बढ़ गया खोर वे नाटको तथा श्रभिनेनाओं की बहुत निंदा श्रीर विरोध करने लगे. रोम में नाट्य-कला का हाम आरंभ हश्रा । जब रोमन लोग रगशालाश्रों में श्रपने मनोविनोद वे लिये अनेक प्रकार के करना और निर्दयना-पूर्ण खेल कराने लग गये श्रीर उन रंगशालाश्री के कारण लोगों में विशासना वहन वट गई नव नाटकों श्रादि का श्रीर भी धोर विरोध होते लटा नधा राज्य का योग से उनका प्रचार रोजने के लिये अनेक प्रकार के नियम बनने हरो : यह निरुचय किया गया कि नह लोग ईमाईयाँ य वर्षक प्रत्मेवी आदि से स्विमितिय ने हासके और जर जीग रविवास या उसरी अहियों के दिन गरफन से ल नारस के द्यारा-लाया में जाया करें वे समाज - युन अर दि । जा ५ । उस समय र्यावकार वर्षेष के स्ट्रोफ विवादन केला र उसाइ वर्स का बहुत व्यक्ति स्वास्त व्यक्तिकार राजकी र अवस्था सम्बद्धाः चेथी के तो हथ में चेनी गये हैं। चेते पतेह विशेष के क्षिया . कोस से नाजय-कला का तर गान नगा गाव अस्त सान हक् ਬਿਆਰਆ ਕਰ ਹਨ। ਫ਼ਸ਼ਬੇ ਕਰ ਦੀ ਬਧੂ ਹਾਂ ਫ਼ਜ਼ੂਰ ਹੁਸ਼ੀ-ਰਾਹਾਂ ਲਗ



गया धान थी । क्षत्र नव नो मुरोप के नाटकों का रूप धानून क्षतांकों की राम था धानून क्षतांकों की राम था धानून क्षतांकों की राम धान काल के प्रशान काल का प्रशास का राम था । इसकी धान का भी कि पुनरच्यान काल के पूर्व धान मार्च युवाप में नाटक व्यवस्थ धानों से बिताइ न एक से होने थे । पर व्यवस्थ प्रशान धानों के बातों से बिताइ न एक से होने थे । पर व्यवस्थ प्रशान धानों के का बातों के प्रशास का प्रशास धानों के बातों के प्रशास का प्रशास वाल के बातों के प्रशास के प्रशास का प्रशास का प्रशास वाल के प्रशास का प्रशास वाल प्रशास वाल का प्रशास वाल क



है। जिस प्रकार रोम में नाट्य-क्ला का प्रचार यूनान के अनुकरचा पर हुआ था, उनी प्रकार यूनान में नाटकों का प्रचार मिल के नाटकों की देखादेखी हुआ था। यूनान में नाटकों का प्रचार होने से बहुत पहले मिल में नाटकों का यहुत हुछ प्रचार था। उनका धारिन्मक क्ष्म भी यूनानी नाटकों के आरिन्मक क्ष्म से बहुन हुछ मिलता जुलता था। वहाँ भी अनेक पार्मिक अवसरों पर देवी देवनाओं के जीवन से सम्बन्ध रावने वाली पटना के नाटक हुआ करते थे। परन्तु निम्न की नाट्य-क्ला भारत की नाट्य-कला के समान इननी प्राचीन है कि उसका उस नमय का ठीक-टीक धोर श्टारलाबद्ध इतिहास मिलना यहुत ही कठिन है।

की मानि, बहुन प्राचीन काल में नृत्य और संगीत कलाओं के संगीत से हुआ था। पता चलता है कि कन्मूची के समय में भी यहां अपने आरम्भिक रूप में नाटक हुआ करते थे। ऐसे नाटक प्रायः पसल अथवा युद्ध व्यदि की समानि पर हुआ करते थे। उनमें लोग नृत्य और गीन व्यदि के समानि पर हुआ करते थे। उनमें लोग नृत्य और गीन व्यदि के साथ कई अकार की नकलें किया करते थे। परन्तु नाटक के गुद्ध और व्यवस्थित रूप का प्रचार वर्दी हैमा से लगभग प्रच्य वर्ष पीछे हुआ था। चीन वाल करते हैं कि तत्कालीन समाह वान ने वर्ष पटल नाटक का आरम्भ किया था। पर हुद्ध लोगों का मत है कि नाटक का व्यविकटनों समाट हुएन-मह था, ओ हैसर्व के लगभग हुआ था। चीनी नाट्य-कला का इतिहास में विभावित किया था

चीन के नाटक-चीन में भी नाट्य-कला का विकास, भारत



र्केनकुर बाह्यपर कींट केंद्रकार की बात में हुक बनरा का ब جد عدد ۾ جاري ۽ جو جو ٻاءَ ۾ راجيءَ ۾ جو جو۔ المناسان المنافية المناسات المنافرة والموافرة المنافرة ال كا مسام على المراشع و المسام ا रियो प्रयोग का रिक्स करित हुना करण का उस दिने की माहास्त्रका है हर सम्बंधा धार बीर प्राप्त प्राप्त करा करा स ٠٠٠٠ ٢٠٠٠ ٢٠٠٠ ﴿ بِيَدِيثِ أَيْدِ ١٠٠٠ ٢٠٠٠ بين مِنْهِ يتنبغ والمناه والمناه والمراث والمناه erit en forsit mit man en et ent ent frit et van الإر المشتخة هيء المسمرة لجيبي وهمانه ليبية لمناي هيئة چ کے جربید کہنچ کے تناسب کی باری کر باری کے بابید يستر حويد ربيا لوجيد العام سيسته رائي في ال والأنظ في والتناخ ال م يُشِيعُ في شَيْعَ عُمْ هُ شَمْعًا جِيمًا مِنْ مِنْ مِنْ اللهِ عَلَى اللهِ عَلَى اللهِ عَلَى الله ليست نے مجانے شے ہے۔ بہر شرع وہ شرب سمع حسرت کا نیپس ایک فیمائی کا این سنغ میں جسے کہا گا فالمتلائدة والأستنجاب ولأبوارس بالمال المالية والمتلا ging an aftern gold go takk tan 1954 affar go مستريتين تستيده دادي يامه يدادي الماسية الماسية الماسية الله الميكية والمحم الله الماء المشاه المتناسبة المتمالة الماسية الله प्रकारी का बार्स कार हर राष्ट्र

प्रिकेट क्षेत्र करिए के 2 तम भारत है है है है है है इस्टिक कर है की राज्य का है जानी का कारत करत की दिक्त कुक के कारत है है है हुए। इस्टिकेट हैं



भारतीय श्रीर संस्कृत नाटकों से बहुत छुद्ध मिलती जुलती हैं।

आधुनिक भारतीय नाटक-हम उपर कह पुके हैं कि ईसा को इसवी शताब्दी के उपरांत भारतीय नाट्य-कला का हास होने लगा था श्रोर श्रन्छे नाटकों का बनना प्रायः बन्द सा हो चला या । यद्यपि हमारे यहाँ के हनुमन्नाटक, प्रवोधचन्द्रोदय, रत्नावली, सद्वाराज्स श्रादि नाटक दमवीं श्रीर वारहवीं शताब्दी के बीच में बने थे, तथापि इसमें सन्देह नहीं कि उन दिनों नाटकों की रचना श्रीर प्रचार दोनों में कमी होने लग गई थी। चौदहवीं शताब्दी के उपरांत तो मानो एक प्रकार से उनका सर्वण अन्त ही हो गया या । इधर संस्कृत में जो थोड़े बहुत नाटक बने भी, वे प्रायः साधारण कोटि के ये । वहाँ इस बात का भी ध्यान गराना चाहिये हि भारतवर्ष में नाटय-कला का द्वाम ठीक उसी समय प्रारम्भ हुन्त्र' या, जिस समय इम देश पर मुसलमानों के श्राकमगाँ का श्रारम्भ हुश्रा था विदेशियों के श्राक्रमणों श्रीर राजनीतिक श्रव्यवस्था के समय यदि लोगों को खेल तमारी श्रच्छे न लगें नो वह छोई श्रस्वाभाविक बात नहीं है, श्रोर इसके परिगाम स्वरूप यदि मारत में नाट्य-कला का श्रन्त हो गया नो इसमें किसी को श्रारचर्य न होना चाहिये। कुद्र दिनों के व्याक्रमणों और राजनीतिक व्यज्यवस्या के दपरांत प्रायः सारा देश मुसलमानों के हाथ में चला गया। श्रारम्भ में ही समलमातों में मंगीत श्रीर गाड्य-कला का नितान्त श्रमाव था ।



विश्व-साहित्य

ä

..टक्

(म्हुम्हाह हुमाहान **स**न्दी)

नडक्याह स्थातु में बता है। मह' नावने के कर्य में प्रमुख होता है। कैंग्रोड़ी में नटक की हाना कहते हैं। हाना के निये सम्हत में मटक की करेड़ा। करके थाना करिक हैं। हाना कर है हाना की मूल्याहर इसी कर्य का चीतक हैं। हाना कर प्रमुख की बहते हैं। जिनने कल्य तेयों के किया कर्यों का कर्यकार इस प्रकार दिया करता है कि नानों के ही काम कर पहें हो। जुतियस सीत्स के स्टब्ट में कीई व्यक्ति हमा इस प्रकार अनुकार करता है। मानों की जुनियस सीत्स है। हन्से का कर्यकार हरता है, मानों की जुनियस सीत्स है। हन्से का कर्यकार हरता क्या का स्वस्त्य है। बीतक क्याने माराभीना का क्युकरण करता है। बीदे तीय करूँ का क्युकरण करते हैं। सटकों की सामीय महत्यों के समाय ही से दुर्व है। एक बात कीर हैं। सटक में सिक्ट क्रिया-क्यारों का ही क्युकरण 



सदमे द्वाचीन नाट्य-शास भरत मृति को हो है। पाणिति के समय में भी साट्य-शास प्रचलित थे। उन्होंने दो श्राचायों का इसे रा किया है—शिलालित और ह्याथि। पर्वजिति के समय में भी नाटक रोले जाते थे। उनके महाभाष्य में कंस-कप और बिल-संपत के सेसे जाने का साफ्-माफ् इसे स्टें।

वैदिक संवाद—हिन्दू नाट्य-साहित्य का प्राचीनतम स्य देवते के लिये हमें देशें की चालीकता करनी चादिये। ऋत्वेट के कहें सून्तें में बुद्ध मनकह हैं—जैसे यम कीर यमी का मन्द्राद, पुरुष्या न्यार क्यारी हत्यादि। इनकी गलना हम नाटकों में बर महत्ते हैं। पुरुष्या कीर क्यारी ना संवाद ही पुरुष्यों में, क्यार्क्स में, चित्तर-पूर्वक चरित हुन्या है, कीर क्ये ही कानिदास में नाटक का रूप दिवा है। कान पहना है, क्यार्क-सहल नाटकों में निर्म्य संगीव हो सन्ता था। बीदों में कामें मंत्रह (क्यार्वि भावव्य या क्यांपरचन) कीड़े गए हैं। किर, इनको चन्नतर करावित् कामें हुण्यावित का ममाव्या किया गया है। बुद भी हो, इनके तो समोदे नहीं कि बहुत प्राचीन-कार्य में हो नाटकों का क्यांपर होने ना। या।

भारतीय नाटकों की विशेषकार निस्तृत्वाटकार बाबी और दिवामीं की एक्टाकों का गुरू न्यान समने ये १ काई मनेगर ने ममें नाटकों को बाबनायों को बार्च-कार्य की श्रांतना में बाँच प्रकार है। दिन्तु नाटिया में नेवीयात कीर विशेष्ण नाटक करण-करण नहीं है। कार्ने हुई कीर और केंद्र कार्य



ध्यमें पासता, गुझ, शास्ति व्यादि विषयों का कार्यवारिक रूप से वर्गास गहना था । सू-पैग-हाश कीम-विजय पर एक ऐसे ही नाटक की रूपना की गई थी । बुद्ध पुन्तक धार्यों के धानुसार यह कहा जाता है कि सम ४८० के लगभग समाद्दान-टी ने नाटकों का काविष्ठार किया । पर व्यविष्ठांश लोगों की यह सम्मति है कि सम् ४०० में संगीत-कणा-विगारद समाद्द्र स्नू में में हो नाटकों का द्रष्टार किया । पेटोमाईन की कार्योहना चौर नाटकों की सृष्टि होने स्तरी।

योशी-आहर्षे का कार्या राय हेंचा है। वहा जाता है, प्रत्येव गाउव शिक्षा-प्रद कीर भाव-पूर्ण होंगा यहिए। को जाहकवार काशील कथवा कानकार-चोक्क गाइकों की रायमा करना है, वह बहर्मीय है। लोगों का यह शिवाम है कि कर नव ऐसे गाइक कथ्यों पर कीने कार्यों, कर नव शुन्तु के बार भी गाइकवार को स्थाय परिने कार्यों, कर नव शुन्तु के बार भी गाइकवार को स्थाय प्राप्ता भोगती पहेंगी, व्यक्तिनाएकों से सपीमान कीन शिवाम गायमें वा भेर नहीं है। बही जाइकों व बाय मह बचना। यह है, क्षारिक जाइकों का गया भरत है कार्यों है। बोल्ह्यांनक जाइकों का भी क्षाय भनी है यहान वहीं पर काल्य कर दिया गया है कि समाह, भग ती, शाक्त कार्योंने स्विक्ती का स्थापित नाएकों से स्वीतिक जाता स्थाप ।

श्रीमी मात्र हरिएस, दार्चा १ श्री की एक्यानी से ही नैया किए को है। बालुक्त अंतरी का प्रचार पत्री कार्य हरू ही महस्मा है। बालुक्त का को बार्ति में अपत्र नार्वी बाल हुई, केंगी कि बार्चा मात्री की अब पूर्वी, ही बालुक्ति



नार्तम् है। लेग-मांता न्यां नहीं, पुरंप है। हो भी घर नयी बा स्थानिय इस सूची में बचना है कि लोग देखबर होते हो जाते हैं। उसका नयर पहुंत्र ही सपुर है। उसके स्थानिय में जूस भी इति-मता नहीं जान पहती। सप से घटी बात यह है कि बा जिस पात्र का स्थानिय बदता है, इसी में क्लिकृत तहीं न हो जाता है। बह धीस नाटकों में पार्ट लेशा है। सभी में बहु नकी को शाता है। बह धीस नाटकों में पार्ट लेशा है। सभी में बहु नकी को शाता है। का साम है 'पुष्पवित्तर्थता', स्थार हुन्तरे का 'क्वरेनेटक' 'पुष्पवित्तर्थता' एक प्रपत्तास से लिया शया है। बहु उपल्यास स्वीधीन किन्हों में स्थापत हुन्तर है, स्थार क्लिस है। स्थापत की स्थान कहाती है। स्थापत हुन्तर है, स्थार की धी। हिस्स का नाम स्थात है। पान के स्थार इस्त्यापीं में उसकी ग्रह्मा है। 'पुष्पवित्तर्थता' को स्थार

ेपूर्व मुख्याने कीर उठ जाने हैं, कीर उठन हुए काबाम का स्वाम कर में गई र उसकी जाने जान कीर सुमत्य तुम ही जाने हैं, पर उसके उनसे कीर साथ बहना है हैं।

प्रश्निष्ट की क्या यह है कि अब सान राज बीच पर बाज गा किया, मेर एक शहकी दूरच का या धाग्य कर कीजों मेंगा में मारी ही गई । यूड-प्यूरिज क कार पार्ट बंगला किरान्ति । बाज में बा गेंगापिक बात ही गई जिए मा किया माम करते मीड़ि, कर गयाह में बाक साम्मीन करती बाड़ी । परान्तु बाया है से पार्टिंग कर का पर कीड़ गई । चीच क्यी बाड़ों सार ने बाद है

gren ef .



यह देखा गया है कि सभी देशों की प्रचलिन प्राचीन गायाओं में समता है। एक विद्वान ने श्रमितान-शाहुन्तल की क्या से विलक्ष्म मिलती-जुलती एक क्या प्रीक-साहित्य से स्ट्रमृत की थी। जापानी नाटकों में हम हेमलेट, मार्लन, एंड्शेमेडास, अथवा हारूँ-रशीट को जापानी वेश में देख सकते हैं। उनकी वार्ते भी वे ही हैं, और काम भी वैसे ही। जो भिन्नता है, वह देश और काल के कारण। बात यह है कि देश और काल के व्यवधान से विभक्त हो जाने पर भी मानव-जाति एक हो है, श्रोर उसकी मृल भाव-नाएँ सर्वत्र एक ही रूप में विश्वमान रहती हैं। अवएव जिन क्याओं में मनुष्यत्व का मधा स्वरूप प्रदर्शित किया जाता है, उनमें परम्पर भिन्तना कैसे हो सकती है ? हेमनेट शेक्सवियर के द्वारा हेनमार्क का राजकुमार बनाए जाने पर भी मनुष्यत्व के कुद्र विशेष नुर्यो में युक्त एक व्यक्ति-मात्र हैं, जिसका अस्तित्व सभी देशों और सभी कालों ने सन्भव है। एक विशेष स्थिति में रहने से कोई भी मतुष्य हेमलेट हो सहना है।

चारुधी-नाटकों की कपेका नी-नाटक कपिक पाचीन है। कोई तीन मी माल पहले कायुकी-नाटकों की सृष्टि हुई है। आरम्भ से ही ये नाटक यहं लोकप्रिय हुए और अपनी लोक-प्रियता के कारण ही विद्वासी की रिष्ट में देय हो गए। विद्वामी में नी-नाटकों को कपना हिया और कायुकी-नाटक कशिवित जनता के ही अपयुक्त समस्त गए। कायुकी-नाटकों का प्रचार बहुता ही गया। इपर विद्वामी की पूजा भी उन पर बहुती गई। इन नाटकों के कारियान के करने कियों भी सन्नित्तित होती थी।



शाला व्यथ्या नट का आदर नहीं किया गया। प्रिस काफ वेस्स के क्यागमन पर जापान के सम्राट् कीर राजकुमार नाटक देखने गए थे। इनमें काशा की का सकती है कि क्या वर्दा नाटकों का क्यिक कादर होने लगेगा, कीर नाट्य-क्ला की उन्निति भी कुटली होगी।

शहरेजी नाटक-रेंगलैंट में नाटकों का प्राचीनतम रूप हमें यहीं के मिरदी (Mystery) खीर मिराविल (Muscle)-गाटकों से मिलता है। इन गाटकों का विषय धार्मिक है। बाइबिल श्रायदा किसी सहारमा की यत्त्व-कथाको के ब्यामार पर इनकी रणता होती थी। भारतवर्ष में रत्ही ये जोड ये जाटव नाट-पच पर िये हुए पाए गए हैं। इस नाटकों क स्वाधिता सनुकति शास्त्रोष साने गए हैं। इनमें हड़ि,ए नि,बीनि ब्यादि सहसुर्यों का चौर हुद्र सीह्यरादन बी.हिस्य चाहि सहासाओं को रगमृभि से कावकोर्स् होत्यापहा है। हैतरीह से रोसे स्टब्से से हास्य अन का सी गमादेश किया ग्रहा है। हाली के खाला का खालान का की की रणता हुई है, क्यारा यह बहुता चाहित १४ १०० है। प्राप्तिक नाइको या विकास हक्या है। सन् १४ । सं १४ चार १४ चार १६ माहर्षे का रीमार काल का । हम लग्नय का माहर कर, वे प्राप्तः मध औं करियों में द्वारी देशने थे। अने १८७६ में गाउँब जाउद्यासाल के क्षेत्रे काले मधी । सन् १५०० व कार बाप विकार द की बाँग हो रिक्टि देशको कार्ने वे साहद क्षेत्रण बार बारियार किए बन्तु Mit brat & wiffe abergrunt fante Wariebeiten



याद जितने नाटक-कार हुए, उनमें गोल्डिस्मिथ खोर शेरीडन ने रुयाति प्राप्ति की । इनके चाद खेँगरेज़ी के आधुनिक नाट्य-साहित्य का खारंभ होता है।

उन्नीमवीं मदी फे श्रारम्भ में नेपोलियन का पतन होने पर, हैंगलैंड की प्रमुता श्रम्छी तरह स्थापित हो गई। इसके बाद उसने श्रपने व्यवसाय श्रीर वाणिज्य में वही तरकी की। व्यापार का केंद्रस्थल हैं नगर। इस लिये नगरों की जन-संख्या खूब बढ़ने लगी।

ښ

١

नगरों में किन मन्यां की वृद्धि के माध-ही-साथ नाट्यशालाओं की भी वृद्धि होन लगी। स्थानी तर नाटक्यर मिर्फ मनोर्शकत के स्मान थे बही प्राय ऐसे ही शिवर जाया करते थे, जो निठल्ले वृद्ध समय विवादा करते हैं परतु अब नगर में रहतवाले नाधारचा स्थित के लोग स्थीर मन्दर भी नाटकपर जाने लगी। दिन-भर काम करते के बाद आशे पदी बीट मनुष्य स्थाना मन न बदलांव ता उसका प्रशीर करते दिन महस्त है भिन बहताने का स्था से स्थाना हमार करते हैं हम सहसाई है मत बहताने का स्था से स्थाना स्थान नगरा में नाटक पर हो है। इस्मेलिए अत्नामवीं मदी के उत्तरार्थ में, नाटक प्रीर नाटक-क्ला का खूब उत्नामित्र हुई

आपूर्तिक नाट्य-साहित्य । २८०० वर्गित र १८२६ गर दीठ इक्त्युर राष्ट्रस्म (१८६२ ८०० १०) भर प्राप्त प्रथम अप वेल्स-थिएटर में खेने जात १००० वर्गित प्रयुक्त कर भेद हे कामेडी और ट्रेजिडी । राष्ट्रस्था १९१म इंग्लाटर के पुनरप्यान की चेष्टा की । प्रमुख्य केल्स-थिपटर के अध्यक्ष ये वेनकास्ट्र



षाद ज्ञितने नाटक-कार हुए, उनमें गोल्डिस्मिय और शेरीडन ने ज्याति प्राप्ति की । इनके पाद ॲंगरेजी के आधुनिक नाट्य-साहित्य का आरंभ होता है ।

उन्नीसर्शे सदी के खारम्भ में नेपोलियन का पतन होने पर, इँगलैंड की प्रमुता खच्छी तरह स्थापित हो गई। इसके बाद उसने खपने व्यवसाय और वाशिष्ट्य में बड़ी तरकी की। व्यापार का केंद्रस्थल हैं नगर। इम लिये नगरों की जन-संख्या खूब बड़ने लगी।

नगरों में जन-संख्या की वृद्धि के साथ-ही-साय नाट्यशालाओं की भी वृद्धि होने लगी। श्रभी तक नाटकपर सिर्फ मनोरंजन के स्थान थे। वहीं प्रायः ऐसे ही धनिक जाया करते थे, जो निठल्ले वैठ समय विनाया करते थे, परंतु छव नगर में रहनेवाले साथारण स्थिति के लोग खोर मल्ह्यू भी नाटकपर जाने लगे। दिन-भर काम करने के वाद श्रायी घड़ी यदि मनुष्य श्रपना मन न बदलाये. तो उसना शरीर केने टिक सकता है १ मन बहलाने का सब से सल्ह्या स्थान नगरों में नाटक घर ही है। इसीलिये, उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्थ में, नाटक श्रीर नाट्य-कला की खूब उन्नीत हुई।

आधुनिक नाट्य-साहित्य के पहले नौलिक नाटकशार टी॰ इक्त्यू॰ रावर्टसन (१८२६-१८७१) थे। उनके नाटक प्रिस आफ़् वेस्स-पिएटर में खेले जाते थे: प्रेगरेज़ों में नाटकों के दो मेर्ट्स, कामेटी और ट्रेजिटी। रावर्टमन ने कामेडी-नाटकों के पुनरूपन की चेष्टा की। प्रिस आफ़ वेस्स-पिएटर के अध्यक्त थे डेन्ड्या

हिन्दी नाट्य-फला साहय । उन्होंने नाट्यशाला में स्वामाविकता लाने का प्रवन

100

किया। येनकाक्द माह्य का जन्म सन् १⊏५१ में हुआ था। सन् १⊂६५ में उन्होंने प्रिस स्नाप येन्स-थिएटर की स्थापना की। जमने नाट्य-कला में परिवर्तन कर दिया। १८६७ में उन्हें 'मर'

की उपाधि मिली । इमी समय लोनियम (Lyceum)-विएटर में इँगर्लेंड श श्रमिद्ध नट हेनरी इरविंग रंगमंच पर आया। बद मन् १८०८ मे

२८६६ तक लीसियम का प्रयंध करता स्ता। उसकी यड़ी की^ई हुई। सन् १२७४ में हेमलेट का पार्ट उसने यही खुवी से रोजा।

शेष्टमधियर के प्रसिद्ध सर्चेंट आफू वैनिस नाटक से वह शाहनाह का बार्ट लेना था। इसमें भी वड कमाल करना था। उसने ^{तरी} का बाच्छी स्थिति कर दी। उसके पहले लोग नटीं का सम्भव

नहीं इन्ते थे। इनका पेशा भी नीच समका जाता था। पर इर्स्स की सब लोगों ने इकतन की। सन १८६५ में वह नाइट वनाय त्या । नटों से इसको सबसे प्रकी यह उपाधि मिली ।

इस समय इँगर्लेंड में काण्ये-बच्छे कवि हुए। उन्होंने नाटक भा जिले । परन्तु कर्नके सारकों को संग्रमुमि पर कारखी *सफा*ना नहीं रहें में बरेही ने प्रसिद्ध कृषि प्रावृतिग के स्टेफ़ी हैं-नामह

नदक क निवे बड़ी तैयारी को । पर वह पश्चि राज से कपिक नहीं चला अनिमन के दो कर एक वैक्ट-नामक नाटको की द्वारिण नै लता। पर उस भी इप सफतता रही हुई। इसीलिये केंच नाटकी र ही बाधार पर बाँगाना म नाटक गांत अने थे। सन् १८८३ में





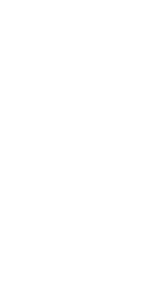
देवी, श्राचरण को विराद करनी, निराशा श्रीर कसाइ-दीनवा को दर करवी झौर मतुन्यों को उन्नति का पय बतलाती।" =न १८७८ में उन्होंने नाटक तिथना खारम्भ किया। उसी साज इतहा 'Pares pleasant and ampleasant' नामक प्रन्य प्रकाशित हुआ। उसमें लोगों में यही उचेतना फैली। उनका ग्रह नाष्ट्रक '\\ - \\ - \\ - \\ Pr\ (-4.2m' रतस्थल व अयोग्य हतराया गया । हा को सभी हर्गुली से ्रता है। बरन्त बराहर चारते हैं कि समान खबने दुर्गुख देश ने नवा बर हरात. साथ घर सहना है। परन्तु समाज काल प्राप्ता कर प्रत्यात सरा चारता। देश चारता था सिक् प्रमाधनात । १२ ^१-० का नाजान संत्रका के सने**र** हन का 9 21 - 4 4E 49 1 रागत विकार है। सूक्ष राग्य क्टक का चित्र हमें ह बास हर । असे पर प्राप्तका के लिए के एक का बहर teatra luvait tribini ili be asia eta tiju let



भी रंगमूनि पर अच्छी तरह खेला मा सके। परन्तु अब आधु-निक साहित्य में नाटकों के दो मेर कर दिये गये हैं। कुछ नाटक तो खेले माने दो के लिये लिखे माने हैं। परन्तु कुछ ऐसे भी नाटक होते हैं, भी अब्य काव्य कहे माने हैं। धैंगरेशी में कर्ने काव्यमय नाटक (Parts) (Praints) करते हैं। परन्तु उत्तर्म का बिरोपना नहीं रहती, जिसमें नाटक रंगमध्य पर सकत्त्वा-पूर्वक संबंध मा सकता है। देनियन के नाटक हमी कोटि के हैं। महसूति के नाटकों में में कवित्य की तटा अधिक है। परने में भी भागत भागते हैं। इंड्रांटन में नहीं। दहते हम कवित्र की तक्ति में मा नाटकों पर कुछ वित्र करना जाहत है।

न्द्रक का द्रास्त्रका है। जोदेवनिक्षण कार व्यक्तिक प्रदेशित नादका में क्षेत्र नास्त्रका पर देश हैं। कि बाम नक जावन के सक्ता प्राप्तिक के उस प्रवर्ध के साम नेद्रकार के अस्तु दर विचारण विस्तान की साम प्राप्तिक

सर्वेद्यात्र सर्वेद्र गांग गांवरास्य । ००० साम्बर् सर्वेद्र स्वयं व्यवस्था । ००० १०० १० स्वयं दे स्वयं प्रस्ति । १००० १०० १०० १०० स्वयं व्यवस्था सर्वेद्र स्वयं १०० १०० १०० स्वयं व्यवस्था स्वयं देशस्या १०० १०० १०० १०० १०० स्वयं व्यवस्था



मधी घरतारे धर्लानिक हैं। शेरमपियर ये नाटकों में भी बेनासा का दर्भन कराया जाका है। हिन्दु-साब का यह दिश्रास है कि सानव-कीवन से एक ब्यहण हालि काम वर बही है। उसी शालिह का महाब प्रश्लों के लिये खलीबिक प्रदेशकों का समादेश किया काता है। रोक्सपियर भी इस घटण शकि को मादता था। उसने भी पता है-' Photo is a tide in the affairs of man' व्यर्जात सत्त्रयों के छोदन में बभी एक ऐसी तहर बहती है, की इस्ते सफ्तता वे स्थित पर पत्ताती है, क्योर निर निष्यस्ता के रश्हर से विसा देनों हैं। इससे चान यह है कि राउनों में ननकातीन समाप्त का विज कंदित शता है। होगों का को प्रचित्त विधास है, प्यक्त समावेश गाउकों से बरना कामधित गरी। रोजनविद्या दे सबय में लोग हैनों के साहित्य पर दियाम परते हैं। करी प्रभार पारिकास के राज्य से जीवती. में जाप पर लोगों का ਵਿਵਾਸ ਦਾ । ਦਵਾਰ ਤੇਵੇਂ ਵਾਣਗੇ ਜੋ ਵਵਾਏ ਵਿਤਵ ਦੇ ਵਦਵਾਰੀ है, काकी होते से भी तेली प्राराणी का राज देश करपामां देव and the side at a

जारक की एक चितायन की रहे । उससे प्रशासन की मान-मानियान सहेश होना अपना है। जाएकीय प्राप्त परिष्ठ की सान-सहेश प्रदेश सानी हैं। जीइराज्यान एक सार बहना है। ध्या उसने ही मानकी जीन प्राप्त चीर प्राप्त की सार्वेश ध्या उसने पर बहु भी नहीं की है। इसने हिल्ला है। यह व से सार्वेश की का महा संव दिखाला प्राप्त है।

रद धेरी हे मरही से मर्श्व दिग्रमा बार है। सहस्री



व्यालियन करते हैं, और इसस्पय पर विचरमा करने वाले सुख से रहते हैं। दान यह है कि धर्म का पथ श्रेयम्कर होना है, सुखकर नहीं । जो पार्धिव सुरा धीर समृद्धि वं इच्छक हैं, उनके लिये धर्म का पथ अनुसरण करते योग्य नहीं, वर्योकि यह पथ सुख की च्योर नहीं कल्यामा की च्योर जाता है। ल'टकी में धर्म की पराजय वनजाने स उसका होनता नहीं सचित हो सकता। धर्म धर्म ही रतना है। इ.स्ट ब्लॉर लास्ट्रिय की छ।या स रतकर भी पुराय सीर-व विन हाना है। इस्ती स प्राचित हात पर भी वह ऋक्षेप रहना है। बुद भो हो। भारतबंध व ब्याप्त निष्ठ स्थातत्व भे हे स्थात माहबी का रचना हात लाए है। इसस साइट नरा कि ४ महा की ऋषसा त्र शही का प्रसाव कार्यक्ष स्वादा काला है। इस लाग र त्रप्रशालाकी र इनका स्वाधनाव सरीका पानका उद्गृहण सङ्गाहे । प्रस्त क्षा महत्व मारा व स्था के प्रदेश कर हो। मारा के का Approximation of the second of the second THE STORES AND THE COMPANY OF THE CONTROL WAS a ingress against

ार्थर माहित्य प्राप्तक र प्राप्त प्राप्त प्राप्त प्राप्त है । प्राप्त का महरू । प्राप्त का का प्राप्त का का प्राप्त का प



ऐमा समावेश करते हैं कि उससे एक ऋपूर्व चित्र किल उठता है। वह चित्र पाठकों की कल्पना पर प्रभाव डालता है। वे श्रपने श्रमुभव द्वारा कवि के श्रादर्श की उचना स्वीकार कर लेते हैं। ऐमे लेखक मत्य का बहिष्कार नहीं करते। वे संसार की दैनिक घटनार्श्वों से ही श्रपनी कथा के लिये नाममी का संप्रह करते हैं। परन्तु उनकी कृति में घटनात्रों का एमा विन्याम किया जाता है कि पाठक उसे प्रत्यच देखने की इच्हा करें। पाठकी के सन में वहीं बात उदिन होती है कि हमने ऐसा देखा नहीं है, परन्तु देखता श्रवस्य चाहने हैं। विकटर ह्युगो इसी श्रेग्यी के लेखक हैं। रोमेटिक माहित्य कल्यना की सृष्टि है। वह प्रकृति से अनीत है। वैलानक की रचना से कल्प गर्भा ऐसी ही लीला हि प्रतोचर होती है। ष्ठापुनिक नाट्य-साहित्य में समाज के यथार्थ चित्रण का स्वय ख्याल रामा जाता है। ऐसे नाट हो। का श्रारम्भ इडमन ने। किया है। उनमें सामाजिक कोवन का यथष्ट परिपाक हुन्ना है। तो भी उनमें समाज के भक्तिय विकास का छास संपाया जाता है। छात. भालोग यह कहते हैं कि इश्चाप्तिक साहित्यु से पिपलि इस की प्रयोजन है। इनकी बान सबीक करना को लागस कर लागस है कि जिस प्रकार बनेशान बुद सार हाब जोवन सुन । सर्विष्य श्रीर वर्तसान का एकच कर ऋग्रासर हा न्हा है। जिस प्रकार वह असीत को बनसान से सन्तीविन करका उलका सविषय का लाग रच पहा है, उसी प्रकार साहित्य साझी सदा अपदर्श की एकबा करना का चेश को भाक्ती है। चार सकस दिल्य का सरप्र उद्दाय यही भाग पहला है कि व्यक्ति क्षेत्र नक्ष्य को बन्धा करके समाभ के साथ



उसके साथी ही। उपन्यास-भर में उनके चरित्र की इसी जिटलता का विश्लेषण किया गया है। रवीन्द्र बावृ के 'घरे-बाहिरे'-नामक उपन्यास में संदीप जैसा इन्द्रियपरायण है, वैसा ही स्वदेश-वत्सल स्त्रोर वीर भी। इन्सन, मेटर्गलक स्त्रयवा रवींद्रनाथ की कुछ प्रधान नायिकास्त्रों के चरित्र ऐसे स्रंकित हुए हैं कि जब हम स्त्रपने संस्कारों के खत्रत ऐसे स्रंकित हुए हैं कि जब हम स्त्रपने संस्कारों के खत्रत रत्न पर दृष्टिपात करते हैं, तो उनके चरित्र में हीनता देखते हैं, परन्तु सत्य की खोर लच्च रखने से यही कहना पड़ता है कि हम उन पर स्त्रपनी कोई सम्मित नहीं देसकते।

वर्तमान युग को विद्वान लोग 'डिमाकेटिक' लोग-यन्त्र का युग कहते हैं। सर्वत्र सभी विषयों की नाना प्रकार से परीका हो रही है। आजहल जैसे सामाजिक और राष्ट्रीय तत्व साहित्य में स्थान पा रहे हैं, वैसे ही वैद्यानिक, दर्शानिक, और आध्यात्मिक तत्व भी साहित्य के अंगीभून हो रहे हैं। अब रस और तत्व का सिम्मलन हो गया है। गेटी और शिजर ने अपने समय में वत्वों को कला के रस-रूप में परिगान किया था। अन्य युगों की अपेता वर्तमान युग में साहित्य का अधिकार-त्रेत्र वड़ गया है। आयु-निक साहित्य में आध्यात्मिक काव्य, नाटक और उपन्यासों की रचना से यही थात मक्ट होनी है।

आजकल इँगलैंड फे नाट्य-साहित्य की जैसी गति है, उसे भली भीति समक्तने के लिये हमें महायुद्ध फे खुद्ध समय फे पहले फे साहित्य पर ध्यान देना चाहिए। युद्ध खारम्भ होने फे टीक पहले, चार-गाँच वर्ष तक इँगलैंड का साहित्य खोर कला-कोहा



स्त्र कावों के रक्त में मा माना शहुद के माने बुद सरकार पा माना तो में कि कर नरकों को किया बादुनिय कर देने को कालरकरा है। इस जिने १६५५ में देनों के में रक्ते में मानुस्थान माणित हुई, जिल्लों माना-केमा वा मुख्य किलेगा किया करा स्वक्त करी हैंगा काव है, तो मी काम क्वीला नासुमान की को बरेवा स्वस्ते बादिय महीका, का पाँ हैं। पुत्र में दाले सम्बन्धादित का बादिय सहीका, का पाँ हैं। पुत्र में दाले सम्बन्धादित का

मुद्र का घरन्य होते ही उन्हें हो दिवसी ही कह्या नाएँ बन्द हो की (माध्य लेगों ने हेवा कि युद्ध का बन्द करी होनेबाना सही, दब दिन बहायह जाटब-गृह स्वयं नये : सन्दर में उमेरे' हे रहाँ कहाँ का इर नारे मा की महन्यहर होने तर्यो : पर सहस्रों साहर दान गया : युद्ध सायहना दर्व मी स्कारकी हुका माकि प्रकेष्ट कहत्वकरों के बहिसे स हेती हो प्रदानग्रही समय साहत्वे सहके का वेल्ला सन्दर्भे राम (तर नेने सहको को नृष्टि हो) जिस्से हुग्जि लिंद हो महा इल्डिंक इंद स्टाहर हों। मुन्दे का हार. बसद मा, इस में में हो देवहरू हुए होंगे। को बसद बीम हुआ। य उन सम्बद्धीतनेह हो। जनगा ने दाही ही प्रवस्त र्दे की रार्व रोग के जन्में तक दे मैं नेव में ही नाहब क्ष्मद्द्रको है। इस्हाहरहा भी दा 😑 🗝 स्पृह्य हु म्ब बन्दन महरू हो रचा दा नह हे हहते ने बजांच ही ह इसी में कपनी जिस्हा हुन बरने के लिये लीगा साइव देखने







भारतीय नाटकों की कई बिरोज़ ताँ हैं। यदि नाटककार कीर नट ध्यने कमिनय में भारतीयता का खबाल रक्खें, तो इससे बड़ा जाभ हो। रवोन्ट्रनाय का एक नाटक 'डाक्यर' कलकत्ते में खेला गया था। इसमें भारतीयता का खबाल रक्खा गया था। इससे इसे सफलता भी खच्छी हुई।

हिन्दी के कुछ नाटककार संगोन के ऐसे प्रेमी हैं कि वे मोंके-वे-मोंके अपने पात्रों से गाना ही गवाया करते हैं। राजा की कीन कहे, राजनहियी तक अपने पद का गोरव भूल कर नाचने-गाने लग जाती है। राजसभा तो दिलकुल संगीतालय ही हो जाती है। यह भी से दकी बात है।























में बिव नया सामाजिन लोगों की निव उस माल की क्येका व्यनेनांग में विलक्षण है, इससे संप्रति प्राचीत मन व्यवलंडन नारने गाटन व्यादि दृश्य काव्य नियमा युक्तिसहरू नहीं दौर होना।

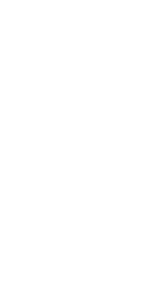
जिस समय में जैसे सहाय करना बहुता वह की रहेशाय रेति-सीति का प्रयक्त जिस रूप से चलता रहे हम समय में इन सहहय-गया के कोताकरण की कृति कीर सामाजिक कीतिपद्धति इन दोली विपक्षी की समीकीन समाजीवारा करके साहकाहि हायकाण्य प्रयक्षत करता योग्याँ ।

गानिकी हायकार प्रस्य कार्य होते हो प्राचीन समस्त सेनि ही परिधास बरे यह कार्यका जारी है, बरोंकि को सब अध्यास सेनि का पहानि कार्यकि सामाजिक लोगों की सन्देगीका होगी पर सब कार्य करता होगी । साह्य-क्लाबीला दिख्याने को देश, कार खाँव प्रधाना है सीने दिल्लीय स्पर्ध हो हमा सम्मी अपने हैं। इपना हो साकारीन कार्यक्ष कार्य की कार्यनामा संस्थान को देश हा कार्यनामां कार्यक्ष कार्य की नार्यनामा

णव र इश्वीद ११४६१० व यह याया दश नामार्ग व्यक्तिपत्र बाद्य राष्ट्रक नामा यह है का भाग का बाद्य शर्म है । इस्तिता स्थायादिकी उच्चा हो इस ६१० व ना याया है। इत्यक्तिति है है, इसमें बाद बार्जिय के लिए का बाद्य व्यवस्था पार्टिक कर बाद्य प्रस्तिय सरमार्गिक साहि है। ताब गाउंद स्वति विवास स्पृति साम्बाणकार, क्यों प्रदर्श, इस्ति विवासमा, इस्ति ।







The second second



पटात्तेन के साय ही नेनय्य में चर्चरिका श्रावस्यक है, क्योंकि विना उसके श्रामिनय शुष्क हो जाता है। जड़ाँ बहुत स्वर मिलकर कोई याजा बने या गान हो उसको चर्चरिका कहते हैं। इसमें नाटक की कथा अनुरूप गीतों का वा रागों का बजना बोग्य है। जैसे सत्य हरिश्चन्द्र में प्रथम श्रंक की समाप्ति में जो चर्चरिका बनै वह भैरवी श्रादि मवेरे के राग की श्रोर तीसरे श्रंक की समाप्ति पर जो बनै वह रात के राग की होनी चाहिए।

र्कशिकी, सात्वती, बारमशी श्रीर भारती वृति, कैशिकी वृत्ति—भो पृत्ति श्रिति मनोहर, स्त्रीक्रनीचिन भूपण से भूपित, श्रीर रमणी-चाहुल्य नृत्य गीतादि परिपूर्ण और भोगादि विविच विज्ञास-युक्त होती है इसका नाम कैशिको पृत्ति है। यह वृत्ति शृहाररस प्रधान नाटकों की उपयोगिनी है।

सात्वती वृत्ति—जिस पृति-डारा शोर्य, दान, दया धीर दास्त्रिय प्रशृति से वोरोपिता, विविध गुणान्विता, श्रानन्द-विशे-पोज्ञाविनी, सामान्य विज्ञास-युक्ता, विशोधा धीर उत्सादविद्गी बार्सगी नायक-चर्जू क प्रयुक्त होती है, उसका नाम मारवती वृत्ति है। बीररस-प्रणान नाटक में इसकी धावरयकता होती है।

श्चारभटी वृति-माया, इन्द्रज्ञाल, नंपान, कोय. श्वायात, प्रतिपात और पंपनादि विकित रीद्रोचितकार्यज्ञद्वित एति श्वा नाम श्वारमटी है। रीद्रस्स वर्यन के स्थल में इस पृथ्वि पर दृष्टि रगनी



प्रतिमना-क्रिसके धनुष्टान द्वारा स्विधनयस्त्रीन में सामाजित सोनों को प्रकृति क्रन्सवी है उसका नाम प्रयोचना है। यह स्वधार नट, व्यक्तिपर्दक या नटी के द्वारा विदित होती है।

नेपध्य-संगयक के प्रधान् भाग में को एक गुन्न स्थान स्ट्या है क्रमका राम रोपध्य है ।

चलंबारियता हमी स्थान से पात्रों को देश-भूपरादि से साधने हैं। एवं रंगभूमि में चादाप्रधार्या, रंगी बादी चथवा और कोई मानुषी धायी का प्रयोजन होता है को घट नेपण्य ही में से गाई पा करी आधी है।

हर्देशप्रीत-गुपित कार्याविका के सराम सम्में का नाम एक्षेत्रप्रीत हैं। कवि को देसका सामन स कर सहेगा है। काका संग्रामक से प्रितिशिक सहोता।

प्रिकाशकाय तिनाम क्या कोई विरास किस या नाम महुद्दे । सन् को प्रकार को है यहा – कार्यकारिक सन्ह और प्राप्तीय सन्ह ।

भी सराज इल्लिख का प्रचार नगर होता है जाकी पार्टकारी कहते हैं। धार्टकारी का काध्य करवे की कानु रिशोर्टक होती हैं, काका नगर सार्टिकारिक करने हैं। जैना स्वास्थ्येत

क्षा भारत्यां के क्षित्र का बंग गुर करण के लिए प्राप्त क्षा में की कुछ निया होगा है, क्षाका गाम प्राप्तीक करता है क वैना सम्थापनस्य में मुर्थकिकियोजस्योदिक करिया।











दिया हा सकता है और उन्हीं के प्राप्तित प्रन्य साटक में परिवर्षित होने हैं।

साटक के जंबर का भाव कैसे विवित्त किया जाता है इसका एक कवि च्याध्येत हुएंत चक्षितान शाहुत्त से बहुपुत किया गया ।

राकुंतला अग्रुसन्य से समन वरेगी इस घर भगवान् करण किए भीति सेरायकारा वसते हैं यह यह है।

वस्य—(जन में दिना करके) काहा का शहराना पितृह में कावती यह मेरेवक्त हमारा हड़व वैमा कावित होता है, जंनर में की वापमा का क्षत्मम तुमा है कमें बारतहान हो। नई है, कीं बहितां कि दिना में कहीं नुत हो। नहीं है। हाय ! हम बनवामी तथा में हैं। मेरे कर हमारे हड़व में ऐसा बेंक्न्य होता है तो बच्चा है दिखेत के क्यमिन्य कुम में भेचारे गुरुष्यों की बचा हमा होती होती:

राहर्षे पाइष । साथ दिवेचरा बन्दे देविया कि इस स्थान साथित्रक्ष कारियास कुल्दीर बन्दे व्यक्ति का रूप पास्य बनके दीक राज्या सम्मीनक्ष्याक व्यक्त कर सद्दे कि गरी

देशक बद्दि क्यिक्स बदि कर आदि का वार्य पेट कर बेस्स बद्दि करने की करके तहि कर पर पेट की क्या हुईसा देशि क्याद्या करके का सहन्। के कार पर बाक की न क्यि करने की करके का स्वयाद समुख्यानकार से विकास हुए जा परमा । दुर्गो हैंदू करित सहन्य माहिएस समय का निवास में क्यादिकी



::

•

सानव प्रशृति की समालीपना करनी हो तो साना देशों से धमाप बरवे साना प्रकार के लोगों के साथ कुछ दिन बाग करे तथा साना प्रकार के समान्न से साथ क्षण्यायन करें, वर्षेष समाय से साने तथा नाना प्रकार के साथ क्षण्यायन करें, वर्षेष समाय से व्यथ्यप्रक तीरकाव, वास दासा, कामीया, दस्यु प्रशृति नीच-प्रशृति कीर साथान्य लीगों के साथ व व्यवक्षण करें, यह न करने से साथान्यप्रकृति सामान्य लीगों के साथ व व्यवक्षण करें, यह न करने से साथान्यप्रकृति सामान्य लीगों के साथ व व्यवक्षण करें, यह न करने से साथान्यप्रकृति सामान्य कि न स्वाच्या करानां के साथान्य हुए का नामान्य कृत्य कि से वाच व्यवकार हुए का साथान्य साथ साथान्य क्षण

•



हास्य का उद्दोषक हो। संयोग ऋंगार वर्षोन में इसकी स्थिति विरोप स्वाभाविकी होती है।

रस वर्रोन-रद्वार, हास्य, करूण, रोद्र, बीर, भवानक, अद्भुत, बीभत्स, शांत, भक्ति वा दास्य, भेम वा माधुर्य, सख्य, वात्सल्य, प्रमोद वा स्नानन्द ।

शृंगार, संबोग और विवोग दो प्रकार का । यथा शहुन्तला के पहले खीर दूसरे खंक में संबोग, पाँचवें हुठे खंक में विवोग ।

हाम्य, यथा भाग्य और प्रहस्तों में । परन्य, यथा सत्त्रहरिश्चन्द्र में रौज्या के विज्ञाप में । रोट्ट, यथा धनज्जयविज्ञय में गुडभूमि-वर्णन ।

वीर रस ४ प्रकार । यथा दानवीर, सत्यवीर, युद्धवीर कीर दयोगवीर । दानवीर, यथा सत्यहरिधन्द्र में 'जेहि पाली 'इनाइ. सों' इत्यादि । सत्यवीर, यथा सत्यहरिधन्द्र में 'वेचि देइ दारा सुक्रन' इत्यादि । युद्धवीर यथा मीलदेवी । च्लोगवीरङ मुझ-राहस । मयानक, कड्मुत कीर वीमत्म, यथा सत्यहरिधन्द्र में रमसानवर्युत ।

शांव यया प्रवोध-चन्द्रोहय में, भक्ति यथा संस्कृत चैठन्य-चन्द्रोहय में, प्रेम यथा चन्द्राहरी में। बात्सत्य ध्यार प्रमोह के बहाहरण नहीं हैं।

क्ष्मुद्राराहस में सुद्ध संगीमात्र से कोई रम न पाकर सुनको क्योगबीर को करना, करनी पड़ी।



योग्य है। यदि इनके विरुद्ध नायिका-नायक के चरित्र हों तो उनका परियाम द्वरा दिखलाना चाहिए। यथा नहुए नाटक में दूंहाणी पर जासक होने से नहुप पा नाश दिखलाया गया है, अर्थान् चाहे उत्तम नायिका-नायक के चरित्र की समाप्ति सुत्यमय दिग्यलाई जाय क्लिय हुआरित्र पात्रों के चरित्र की समाप्ति कंटकमय दिग्यलाई जाय। नाटक के परियाम से दर्शक और पाठक कोई उत्तम शिवा च्यारप पार्थे।

नाटक की कथा-नाटक की कथा की रचना ऐसी विचित्र कीर पूर्वापर- बद्ध होनी चाहिए कि जब तक कंतिम कंक न पड़े किया न देखे, यह न प्रगट हो कि खेल कैसे समाप्त होगा। यह नहीं कि 'मीथा एक को पेटा हुआ, उसने यह किया वह किया' प्रारंभ ही में कहानी का मध्य योध हो।

पानों के रवर-नोक, हुपे, हान, बोधादि के समय में पानों को स्वर भी पटाना-पटाना द्वित है। जैसे स्वाभाविक स्वर पदलवे हैं, पैसे ही प्रतिम भी पटलें। साप ही साप ऐसे स्वर में बहना चाहिए कि पोप हो कि पीरे-पीरे बहना है, किन्तु हम भी इनना उप ही कि धोनायद निष्टंटक मुन लें।

पानों की टिटि-यहान परम्पर बार्ल करने में पानों की रिट परम्पर रहेती, किन्नु बहुत में निषय पानों की दर्श को की कोर देराकर कहने पहले । इस कारमार पर कमिनय-पाटुर्व पह है कि यहानि पान दरीकों की कोर देखें किन्नु यह न कीय ही कि यह बातें ये दर्श को कहने हैं।











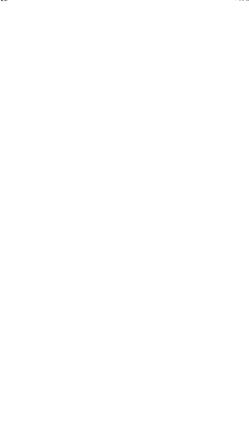
पूरा अध्ययन किया या। इसकी लेखनी ने बैंगला साहित्य में एक नये युग का आविमांव किया। दिस समय रामनारायण वर्करत्न का लिखा हुआ रत्नावली नाटक सेला गया तो मधुसूद्दनद्त्व के हृद्य में विगुन गति से यह ग्रुम भाव जागृत हुआ कि सची प्रतिभा विदेशी भाषा में अपने महत्व को प्राप्त नहीं कर सक्ती। जिस मधुसूदन ने आज तक बैंगला में एक अक्षर भी नहीं लिखा या वह सोहे ही समय में अपनी भाषा का स्वेश्रेष्ठ कवि प्रसिद्ध हुआ। इस समय से पूर्व हिन्दू कालिज के पढ़े हुये बहाली नवसुवक अपनी भाषा और साहित्य को घृणा की टिष्ट से देखते थे और कँगरेज़ी भाषा में लिखने में ही अपनी शान समस्ते थे। परन्तु इस घटना के बाद वंगाल के लेखकों ने अपनी मानुमाषा में क्यांति प्राप्त करना ही 'प्रपना आद्रशं रखा है।

मधुसूद्दद का पहला नाटक "शिमिटा" वंगाली नाटकों से यहुत प्रसिद्ध है। यह कारोली नाटकों की शैली पर लिखा गया था। इसकी भागा सरल की। यह वोजवाल की भागा थी। इसके रामनारायण तकरल की भागा का पारिडल्प न या। इसके बाद 'पदावती" कोर "इप्पाइमारी" लिखे गये। इप्पाइमारी भारतीय नाटकों में पहला दुःखाल्य नाटक (Trazedy) है जिसमें उद्यपुर की एक राजहमारी की विपादनय कथा का वर्णन है। इसमें सन्देह मही कि मधुमूदन ही काधुनिक केंगला नाटक का प्रवर्तक कहा जा सकता है।







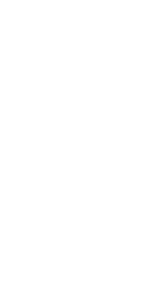


१९५ दिनों गांतरस्थार बा बरियान सुनी हुई जिल्ला रहाये हैं। उन्हों ने नीर्य बहे क्योंने ने राज्य में किया नाम है। इसीपूर्यक है हैं बह तमा नहींने सारी दिना क्योंगा है।

प्राचीन हिन्दी नाटक

(भारतेन्दु हरिश्चन्द्र)

हिन्दी भाषा में वास्तविक नाटक के खाकार में प्रन्य की सृष्टि हुए पचीस वर्ष से विशेष नहीं हुए । यद्यपि नेवाल कंवि का राङ्घन्तला नाटक, वेदांत-विषयक भाषा-मन्य समय-सार नाटक. इज्ज्ञासीदास के प्रबोधचन्द्रोहर प्रमृति नाटक के भाषा-अनुवाद नाटक नाम से अभिदित हैं, किंतु इन नदीं की रचना काव्य की र्माति है, ऋषाँत् नाटक-रीत्यानुसार पात्रप्रवेश इत्यादि हुछ नहीं है । भाषाकविकुलनकुटमाणिक्य देव कवि का देवकायाप्रपंच नाटक श्रीर श्रीमहाराज चाशिराज की बाजा से बना हुया प्रमावती नाटक तथा श्रीमहाराज विश्वनाथितः रोवौ का ब्यानन्दरप्रतेहन नाटक बद्यपि नाटक-रीति से बने हैं, किंतु नाटक पावन नियमों का प्रतिपालन इनमें नहीं है ब्योर ये बन्दप्रधान प्रन्य हैं। सिग्रह् नाटक-रीति से पात्रप्रदेशादि नियम-राज्ञाय द्वारा भाषा का प्रयम नाटर मेरे पिता पूज्य-वरण श्री कविवर गिरधरदास (वास्तविक नाम दावू गोपालचन्द्र जो) का है। इसमें इन्द्र को ब्रह्महत्या







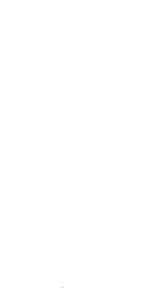
यहाँ पर यह पात प्रकाश करने में भी हमको कठीव कानन्य होता है कि रूप स्टब्स्सर श्रीष्ट्रत में डेन्कि पितवाट साहब ने भी प्रशुक्तला का हिन्दी भाषा में अनुवादक किया है। वह अपने २० मार्च के पत्र में हिन्दी ही में मुनाको लियते हैं 'उस पर भी मैंने हिन्दी भाषा के सिरालाने के लिये कहें एक पोदियाँ बनाई है। उनमें ने हिन्दी भाषा में शबुक्तला नाटक एक है।'

रिन्दी भाषा में जो सबसे पहला नाटक सेला गया बहु जातकी संग्रह था। इवर्गवासी निष्ठवर पानू ऐस्वयंनास प्रयुक्ति है वे प्रयक्त से प्रेष्ट शुक्त ६६ सम्बन्द ६६२४ में बनारम थियेटर में बड़ी प्राथम से या खेला गया था। समायया से बचा निकाल बर बहु साधक परिष्ट की मलासमाद जिवालों से बनाया था। इसके पीले प्रयास की समाप्त है नहीं से मार्थिय सेममोहिती स्तीत साधिरियाद सेमा था। प्रथमिता देश में तीव निष्य पर परने याना कीई कार्य निष्ठ कर का नाटकममान नहीं है।

घरनीन्द्री-सहरू-टाहिका

अपूर्व कार्ट्ड	(धीरियमकाः)
ناهة أغط	(गण शरगर्भिः
Since	रीतराइ)
म-१-देश्यन्	-

क या बहुत्या जाते हैं । योषानीत्यायी स्थाप साथ अवद्यापित के बहुत्या का करकाय है।



प्राचीन हिन्दी नाटक

सञ्जाद-सुन्दुल	(बावू केशोराम मट्ट विद्याखंधु-सम्यादक)
शमशाद-सौसन	
जय नारसिंह की	(पं० देवकीनन्दन विवारी, प्रयाग समा-
	चारपत्र-सन्पाद्क)
होली खगेरा	,,
च्छुदान	jı
पद्माववी शर्मिष्ठ।	चन्द्र सेन (पं० वालकृष्ण भट्ट हिन्दी-
	प्रदीप-सम्पादक)
सरोजिनी	(पं॰ गयोशद्त)
••	(राघाचरया गोस्तामी भारतेन्दु-सम्पादक)
मृच्द्रकृटिक	(पं० गदाधर भट्ट मालवीय)
**	(पं० दामोदर शास्त्रो)
99	(बाबू ठाकुरदयालसिंह)
वारांगनारहस्य	(पं॰ बदरीनारायण चौधरी, स्थानन्द-
	कार्मिवनी के सम्पादक)
विज्ञानविमाकर	(पं० जानी विद्यारीलाल)
ललिवा नाटि≢ा	(पं० श्रम्बिकादत्त व्यास साहित्या-
	चार्ट्य वैप्याव पत्रिका श्रीर
	पीयूपप्रवाह के सम्पादक)
देव-पुरुष-दृश्य	17
वेणीसंद्दार नाटक	33
गोसंकट	13
जानकीमहत्त्व	(पं॰ शीवत्ताप्रसाद त्रिपार्डी



भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के नाटक

(मिश्रयन्धु)

भारतेन्द्र के नाटकों का मंश्रिप्त विवरमा

(१) 'नाटक'नामक ४६ इहीं के लेख में इन्होंने नाटक के लक्षण, नाटक बनाने को रीति तथा नाटक का इतिहास लिया है। इनके क्षतिरिक क्षार बहुत की जातने योग्य बार्वे नाटक के शिष्य में यांजित हैं, शो बहुने योग्य हैं। इसकी रचना संश्व १६५० में हुई।

(२) मत्यद्विधान्द्र" नाटक नव्य १६२२ में बना। या स्वाय-ऐस्पेश-कृत "पदक्षितिक" के कात्रय पर बनाया गया है, परस्तु वनका समुद्राद नगी है। यह एक स्वतन्त्र मन्य है, कीर सार्वेश्टर की क्ष्मुक स्वतायों से इनकी गया। है। इनके गया राज्य हिथ्यन्त्र का नाय-वर्ताण का वर्षेत्र है। राज्य के या पूर्व काल से जिन प्रकार करियों का नायर होता में, यह इनके पूर्व कर से हिम्बताया गया है। गया काल से वाले हिस्सी का हिस्सीन क्या दिया गया है। सक्स से काले वाली हिस्सी का हिस्सीन क्या दिया गया है। सक्स से हिस्सीन की संवयितका इन्ती पहा हुई सी हि क्या से सी







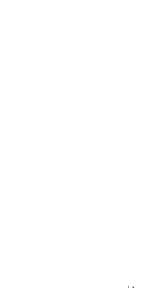


































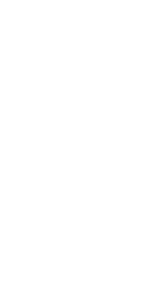






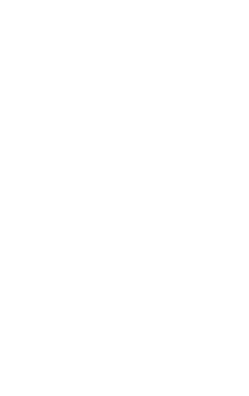














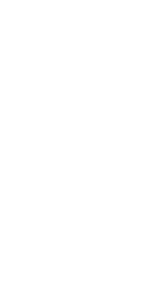
























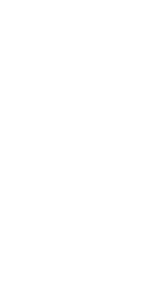






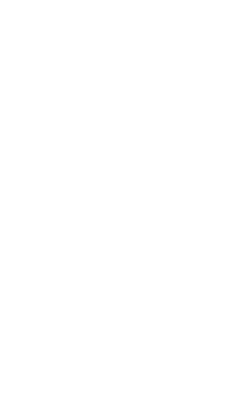




















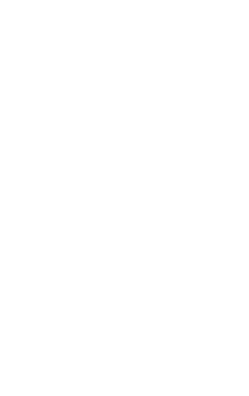






















.













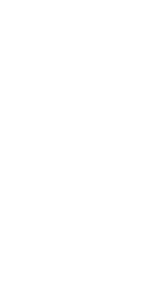








































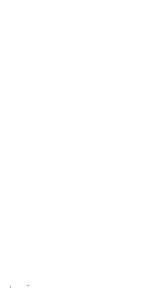










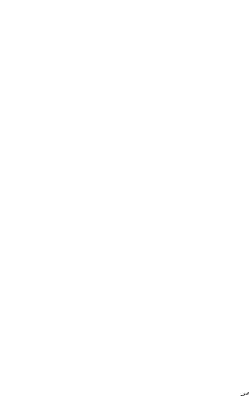














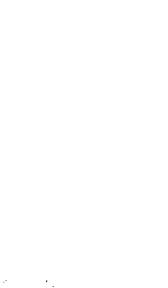












हिन्दी श्रीर श्रनुवाद नाटक

हेसक-डा० सहमस स्वस्प एम० ए० पी० एच० डो० वीस्त्री शताब्दी के भारतीय माहित्य में एक नए युग का इका है। श्री स्वीन्द्रनाथ ठाव्र की स्रोजनिवनी लेखनी हा प्रमाव केवल बंगाल पर हा नहीं है जिन्तु नारे भारतवर पर है। र्च्द् विता भी श्रपनी मर्यात का ध्यहन कर रही है। फारमी भारती का अनुकरण अद हुटना जाता है , सर मुहस्मद इक्दान **ही हरिता ने इसकी पुरानी हड्डियों में नए जीवन क**े संचार अर दिया है। हिस्दी से भी खड़ी वीली का सम्प्रदाय खड़ा ही गण है स्त मत के अनुपारिकोको दिन प्रतिदिन वृद्धि हो रहा है। महाराय मैरितीशरण गुष्त के काव्य इस मन को प्रतिष्ट है। स्हार य प्रेमचन्द्र की कहानियों से याधार्यन' क' फ्राम'म हाँग्राोचर होता है। नए गुनका सभी प्रादुआंव नहीं हुन्या, परन्तु निग्नय रूप से पहा भासकता है कि सूत्रपात हो चुका है। इन सूत्रपात के असिन्दिग्ध चिद्व स्यान-स्थान पर दिमाई दंते हैं एक लेख में - को माडने रिल्यु, मार्च सन् १६२३ मे प्रकाशित हुया था—सैने दउहाया था कि समीसवी राताब्दी के झारम्भ ^{में दर्गम} तेस के क्रारिक ने स्क





8 10 3 10

























रणहोड्दांस उद्यराम आधुनिक गुजराती नाटक का प्रमंक रणहोड़ माई उद्यराम है। उसने संस्कृत के कई नाटकों हो गुजराती में अनुवाद किया। उसका हरिरचन्द्र नाटक बहुत होक क्रिय हुवा, और उसका 'सलिता दुःख दर्शक' गुजराती का बला सामाजिक दुःखान्त नाटक है। इसके बाद गुजराती में कई क्वी नाटक मण्डलियों का उद्य हुआ। दुःख का विषय है कि हुवे से गुजराती नाटक जो सफलता से खेले जाते हैं, प्रकाशित ही होते।



















ल्हर पहुँचनो रहती हैं, परन्तु उनमें महहार मात्र होता है, वर्यो-विन्यास नहीं होता। श्रवत्व ऐसे शब्द को 'ध्वन्यात्मक' कहते हैं, वर्योकि वह ध्वति पर ही श्ववत्तन्वित होता है। दूसरा वर्योत्मक शब्द वर्यो-विन्यास-युक्त होता है।

ध्वन्यात्मक शब्दों में क्षितना श्राटर्पण है,यह श्रविदित नहीं । बावों का मधुरवादन,पत्तियों का कलकृतन,श्रमनीय करठों का स्वर. व्यतना हदय-विमोहक है, यह सब जानते हैं। शेख सादी यहते हैं—

'मुन्दर मुख से मधुर छवित कहीं उत्तम है। वह आतिन्दर करती है, और इससे प्राणों की पृष्टि होती है। वालकों के करठ की कुरू क्या स्वर्गीय सुधा नहीं वरसानी ? मुस्तीनतोहर की मुखी क्या पाइप एवं लगा-वेलियों नक को स्वर्गमन नहीं करती थीं ? कविवर सुरदास जी की भूनह हिर मुखी मधुर यजाई? कितना समीहर है।

क्या नट को हुमड़ी का नाद सुनकर सर्प विद्याप नहीं हो जाता ? क्या विषक की बीखा पर हरिख अपना प्राय करना नहीं कर देता ? ध्वीन अपार शक्तिमयी है, ध्वप्य ध्यान्यात्मक राज्द भी प्रभावशाहिता में कम नहीं।परन्तु वर्षात्मक राज्द कससे भी लो होत्तर है। ससार का साहित्य, जो समस्त सम्य-ताओं का जनक है. वर्षात्मक शहरों का ही विसृति है। इसी-लिये ध्वन्यात्मक में वर्षात्मक शहरों का महत्व अधिक है।

ब्यबहार में देखा जाता है कि जिसको बाबाराजि जितनो यहां कौर मुसंगठित होती है, संसार में बसको ब्यत्नों ही सफलता निजनों है। 'बात की करामात' प्रसिद्ध है। वयन-रचना



अपूर्व धानन्द का समुद्र दमड़ रहा है, और उसमें लोग सन्न हो रहे हैं. हाय-पाँव मार रहे हैं, उद्यल रहे हें और जितना ही रस का पान कर रहे हैं, उत्तरोत्तर उनकी तृषा उतनी ही बढ़ती जा रही है।

वरठस्वर, मधुरध्वनि, श्रौर वचन-रचना के श्रांतरिक्त वेश-विन्याम, भावभंगी, कथन-शैंली इत्यादि का प्रभाव भी हृद्य पर पड़ता है। इनकी सहकारिता से वचन-रचना अपने मावों को श्राधिकाधिक पृष्ट कर सक्ती है। कर-संचालन, श्रंग-संचालन, श्रयच श्रंगुलि-निर्देश से श्रनेक श्रम्पष्ट भाव हो जाते हैं श्रीर कितनी ही क्षत्र्यक्त वार्वे व्यक्त वनती हैं। नृत अयवा नृत्य एव श्रभिनय के ढंग की श्रनेक कलाएँ भी यथावसर भावपृष्टि का साधन वनती रहती हैं। अनएव इनकी उपयोगिना भी चल्प नहीं। जब ध्वन्यात्मक स्त्रीर वर्णात्मक शब्द स्त्रंग संचालनादि श्चन्य नाधनों श्रीर कलाश्रों के श्राचार से किसी भाव की पुछ करते हैं, उसको वार्स्तविक पुष्टि इसी समय होनी है स्रोर साहित्य के इस रस की यथार्थ उत्पत्ति भी प्राय. तभा होती हैं, को सहदय-हृदय-संदेश माना जाता, श्रीर जिसका सुख श्रहानन्द समान कहा जाता है। इसीलिये प्रायः रख्य कान्यों द्वारा ही साहित्यिक रम की मीमांसा की गई है,क्योंकि इसमें प्रायः सभी साधनों का समीकरण होता है।

रस की उत्पत्ति

यह स्वाभाविकता है कि मतुष्य मतुष्य के मुग्र मे मुदी अोर इसके दुःख से दुखी होता है। संबंध-विशेष होने पर इसकी मात्रा ,



रति चादिक स्थायी मार्वो के आधार नायक-नायिका, 'आलम्बन' क्षोर उनके उद्दोन करने वाले, चंद, चौदनी, मलय-पवन श्रादि 'इद्दोपन' कहलाते हैं।

'रति आदिक स्यायी भाजों का जो अनुभव कराते हैं, उन्हें अनुभाव कहते हैं।'

'रित श्वादिक स्थायी भाव में श्वाविर्भृत श्वीर तिरोमृत होकर को निर्वेद श्वादि भव श्वतुकृतता से व्याप्त रहते हैं, वन्हें विशेष गैनि से संवरण करते देखकर संचारी कहा जाता है।'

मानव के हृद्य में वासना श्रयवा संस्कार-रूप से श्रनेक माव मदा व्यक्तिय रहते हैं, वे दिसी कारण-विशेष द्वारा जिस समय व्यक्त होते हैं, उसी समय उनकी व्यक्तिय का पता श्रवता है। इन भावों में जिन में श्रीयक स्थिरता श्रीर स्थापिता होती हैं, जो किसी भो काव्य नाटिकाहि में श्राणोपान्त उपस्थित रहते हैं, प्रधानता श्रीर प्रभावशासिता में श्रीमें में उत्स्थे रस्ते हैं, साथ ही जिनमें रस-रूप में पशिचित्र होने की शक्ति रहती हैं, उनकी स्थापी भाव वहा जाता है।

"जैसे मनुष्यों में राजा, शिष्यों में गुरु, बैने ही नव भावों में स्थायी भाव श्रेष्ठ होता है (" - भरत मुनि

शृंशार, हास्य, करून धादि नव रसों के प्रनहरित, हास, शोक पादि नव स्थायी माव है। इन स्थायी भावों में से कोई एक प्रव विभाव, ष्यतुभाव धौर संवारी भाव की सहायदा में लोकोचर धानन्द रूप में परियाद होकर स्थक होता है, तब उसकी 'रस' संता होती है।



स्थायी भाव के कारण को विभाव, वार्य को अनुभाव कोर सह-कारी को संचारी भाव कहते हैं।

रसारवादन प्रकार

ध्याप लोगों को समका अनुसव होगा कि रामलीला के हरवीं

षा सबधे हृद्य पर समान प्रभाव नहीं पहुता । बोई उनको ऐसकर अन्यंत विमुख्य होता है, बोई आत्य खोर कोई नाम-मात्र को । रस वा अधिवारी सबधा हृद्य नहीं होता । जिसमें साबुकता नहीं शिवकी वामना रस-महत्वाधिकारियों नहीं—और जिसकी

संस्कृति में रसनातुक्त साधनाएँ गहीं; उनके हृद्य में रस की

स्मास्त साधनों ६ उपस्थित होते भी जिसके हृदय का स्थायी-भाव प्रधातस्य व्यक्त मती होता, उसके हृदय में इस की उत्पति होती हो सही । इस की उत्पत्ति होती अब स्थायी भाव स्थल

होबर विभाव, शतुभाव सीर स्वारीभाव के साथ संबंध नहीं। हो श्रावता ।

बचों करी प्राप्त राजी है

उल्पंति नहीं होती।

यहीं यह प्रश्न हो सबका है कि स्थार्थ भाव के स्थल होने का क्या कर्य है दूसरी कल यह कि सद दर्श है भी रनियाद की समना

हिल्ले स्थापी क्रम्या संचारी साथ है, ये बागरा-कर से सर्देश सामरसाथ के हाण से देंगे ही विद्यासन व्हले हैं, जैसे द्वारी से सर ।

कता समारी कि 'राज्यानी हर्म्मा', विस्तु हर्म्मा की गाउँ कुछ हर्मन यह ही विदित्त होनी हैं । हमी कबार सम्बोधम सी वियोद कपहों







लगा, त्यों-त्यों नई-नई धारणाएँ हुई और एक के बाद दूसरे मत प्रकट होने नने। किसी ने कहा—"विनाव अनुभाव और संवारी भाव छोनों मिडकर इसकी सृष्टि करते हैं, क्योंकि वे पर-स्पर अन्योग्याधित हैं।" किसी ने कहा—'वीनों में जो चनत्वारी होगा, उसी की रस-संज्ञा होगी, अन्यथा किसी की नहीं।" किस समय यह विज्ञाद चल रहा था, उसी समय महासुनि भरत ने यह व्यवस्था दी कि विभाव, अनुभाव और व्यभिवारी भाव के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है। किन्तु यह उन्होंने नहीं बनलाया कि इन तीनों का संयोग किसके साथ होने से, परस्पर होने से अथवा किसी धन्य के साथ होने से उन्होंने लिया है—

"जिस प्रकार गुड़ादिक इच्च ब्यंझनें खोर खोषधियों से विविध प्रकार के पानक रन बनते हैं, वैसे ही खनेक मार्चे से युक्त होकर स्थायी भाव भी रमत्व को प्रान्त होते हैं।"

विभाव, अनुभाव और संचारी-भावों का जब स्थायी-भावों से संयोग होगा, तभी रम की उत्सित्त होगी। रम किस में और पैसे उत्सित होता है, इस बात का निर्दाय नहासुनि भाव ने अपने उद्वितित सूत्र में स्पष्टतया कर दिया है। किन्तु इसमें अर्थ में ही मत्तिसन्तता हो गई, इसनिये विश्वाद कुद्ध दिन और पन्ता। मह-सोस्टू, शंहक, भट्टनायक भग्नद, आभिनवपुन्त, अपन्ताय आदि असेक विद्वानों ने इस विदय पर अपने विषयर निर्माही।

सम का विषय बड़ा बाइमन्तरी, कुछ मर्मन विद्वानों की धारता 🍃 है कि कब तक रम की विवन मोमांमा नहीं हुई । जो हो, G







मन बर उन्हें बन जाने के लिए प्रस्तुन देखती है और उनके मुख की श्रोर ताकती है, श्राठ श्राठ शाँसु रोने लगती है। फिर जब भगवान् रामवन्द्र भगवती जानकी को वन की भयंकरता वतलाने लगते हैं, उस समय न जाने वहीं का भय आकर उसके जी में समा जाता है। उस समय तो वह श्रीर भीत होती है जब जनक-निन्दिनी के छुपुनाद्वि कोमल कन्नेवर पर दृष्टियात करती है। किन्तु जनता को ये समस्त्र दशायें क्या उसे दुःखभागिनी बनाती हैं, नहीं, कदापि नहीं। बरन प्रत्येक दशाश्रों में बर् बिचित्र सुख श्रीर श्रानन्द का श्रनुमन करती है। क्यों ? इसलिये कि जिस संस्कृत से उसका हृद्य संस्कृत है, उसके वरिवार्थ करने की उसमें बड़ी ही मुग्यकारी सामन्नी उसको मिलनी है। दूसरी बात यह कि मानसिक भावों की जिस समय जिस रूप में परियात होना चाहिये, इस समय इसके इस रूप में परिगत होने से ही श्रानन्द श्रीर मुख की प्राप्ति होती हैं, श्रन्यया चित्त बहुन तंग करता है श्रीर यह ज्ञात होने लगता है कि हृदय न भाने क्सि वोम से दवा जा रहा है! तीसरी बात यह कि श्रामिनय करने के समय श्रीभ-नेता अपने पार्ट को जब इस मार्मिकता से करना है कि श्रमती श्रीर नकली का भेद प्राय: जाता रहता है, तो उस समय दर्श हों को जो आनन्द होना है, वह भी अपूर्व ही होना है। चाहे यह श्रमिनय करुया रस का हो, वाहे वीभत्स या भयत्नक रस का। कारण इसका यह है कि उन ममय की अभिनेता की स्वरमंगद्रना ब्रौर ब्रद्भुत श्रमुत्ररग्रशीलता चुपचाप दनगर विचित्र प्रभाव डाले विना नहीं रहतो ।



वा श्रवं लोड से सम्बन्ध न रखनेवाला है, श्रवं श्रयवापरम विलवण नहीं । नाटकों श्रीर काओं में करणा, वीमतम श्रीर स्वानक वर्मा में भी शानन्द की ही शान्ति होती है हुएसों की नहीं ।

रस और ब्रह्माखाई

रम पा श्राम्बाद ब्रजानन्द के समान होता है,सनम्ब साहित्य-समीतों का यही मिद्धान्त है।

म्यास्तार पर्यात् सुक्षि-द्रशा में श्रममात्र ही प्रवाशित रहता है फ्राँर भावों पा निरोभाव हो लाता है। विभावादि कर स्थावी भावों के साथ मिलकर रम-रूप में परिवात होते हैं, उस समय भी पेवत रम विकासित रहता है, स्वीर सम उभी में लीत हो लाते हैं, हमलिये पर प्रवास्ताद सर्वेदर है, ख्रमण प्रवास्ताद से उनकी समानवाह ।

े—नाटवों में हैंग्य जाता है कि रम वा हड़ेव होता पर तथ बाल में नारणों महुष्य मान्यहुण्यवद् बन जाते हैं, एवं साथ हैंगते-रेति और तारियों बजाने हैं, ब्यामन्त-अति बरते हैं, उपमें-पामें बा मुन्यू बाने लगते हैं और बजी-बर्चा करने सा पार हा जाते हैं। या रस बी चार्जीविक नाही बयोबि साधारणका लोग में लो एक मार्ग्यिकीय में ही बन्धी उपस्थित हैंग्यों करते हैं। तूमसे बाल बाद कि पर पापरिस्तित हैं, इस्ति के बिल काल घो सामें और प्रमें लो हैं बहुत में बहुत बही समय में बीट कींग दिवानिक हो ता हैं। बद्या प्रस्ताय में समान साह देगरे और बनाय बहुत-स्वरूग

बदा राज्य में समान साह देगरे और बाद बहुस्सुसर यार्जे के प्रणावार को प्रजित होती हैं हैं निमरी हैंसे इससा



भी निस्सन्देह बिगड़ा होगा, इसलिये श्रनुभाव भी उसमें मिले श्रीर वीनों के श्राधार से ही रस की सिद्धि हुई।

षेवल अनुभाव द्वारा रस विकास—

टपटप टपकत सेदकत खंग खंग शहरात । नीरजनयनी नयन में काहें नीर लखात ॥२॥

स्वेद विन्दु का टपकना, श्रंगों का किमत होना, श्रांकों में काल श्राना अनुभाव है, श्रोर इन्हीं का वर्णन होहे में है। किंतु कारण श्रमकट है, किसी विभाव के कारण ही ऐसा हो रहा है, जाहें वह श्रालन्यन हो श्रयवा उद्दोपन, श्रतपत्र श्रमुभावों द्वारा ही विभाव की स्चाना मिल रही है। किसी श्रम, श्रावेग, विता और संका के द्वारा हो ऐसी दशा होने की सम्भावना है, श्रवव्य संचारी का उद्दोधन भी उसी से हो रहा है।

फेवल संचारी द्वारा रस का स्त्राविर्माव-

करति सुवारस पानसी रस दस है सरसाति । कत गर्यदगतिगामिनी उमगति श्रावति जाति ॥२॥

इस दोहे में हर्ष खोर खोत्सुक्य पूर्ण मात्रा में मौजूद हैं, जो कि संचारी हैं। ये ही इस विभाव की खोर भी संकेत कर रहे हैं जो उनके खाधार हैं। उमग-इमग कर खाना-जाना खनुमाव के खपदूत हैं।

इन उदाहरणों से यह स्पष्ट है कि विभाव, श्रानुमाव और संचारी भाव तीनों के द्वारा ही रस की उत्पत्ति होती हैं, किसी एक के द्वारा नहीं। जहाँ इनमें से कोई एक या दो होता है, वहाँ श्वाचेप द्वारा शेव दो या एक का भी महस्य हो जाता है।















रसाभास

रम अब अनीचित्य से प्रवृत्त होता है, तो उसे रसामास घड़ते हैं। रमभंग होने पर ही रसामास होता है और अनीचित्य ही रसभंग का कारण है। देश, काल पात्र एवं सामाजिक आचार विचार और व्यवहार के अनुसार अनीचित्य अनेक रूपरूपाय है, किर भी लह्य की ओर हाँह दा करेग्य के लिये, इसके कृतिपय रूपों का वर्णन मिलना है।

रमाभाम के कुछ उटाहरण नीचे लिखे जाते हैं रोष्ट्र साभाम यथा

्यात कहा विराध को को मासस बज्यात प्रकार को बावरी यही कार्यर ही बान र

्रक्रम पर जो वहरों तोत नहीं दिन संवेशक शुर हैं इस गण के रहार ये हैं के ये कि आहे आईसा ना होएं की को को के रहे हैं इसके अवस्थात प्रकासिक है। जो कि व इसके के इस्टेडिंग के की

en and the second se















योग्य है कि इनकी फ़िल्मी प्रशंसा की जाय कह योही है। वे समस्य विध-विमृतियाँ पवित्र इसलिये हैं कि उनका इर्शन तिहींप दे खीर वे लोकोसर आसंदर्भद्दत है। यह श्रांसार या महास्यह है।

जम इस शृंगार को समन्त प्राप्त हो जाता है, तो मोना स्मीर गुगंध की कटावर धरितार्थ होती है, उस समय बालव में मण्डि-काग्रम योग क्वमियत होता है, निर्मोदेशीय जीवन बन जाता है स्मीर स्वर्ण कलम र्यान्दिक्त स्थापन !!

धरा इन बानों पर गंभीतना पूर्वश विचार बशने पर यह नहीं स्वीपार बशना पत्ना कि गृश्तार रस की पवित्रता और नहत्तानों वे विषय से औ प्रथम किया गया, वह साथ और मुक्तिनंत है ।

भृद्वार रम की व्यापकता मनार में को पवित्र, कराव, कश्चल खीर दर्शनीय है। उसने

श्रीमार समाप्ता विशास है, इस वधन से दा श्रीमार उस विजय ध्यापत है, रुएए हो लाला है।

पारियों से गानुष संदेशकात है। इस दसकी कीत दृष्टि कार दे तब प्रशास रस की द्यापकता कार्या आखियों की क्येपल समा कार्यिक पार्ट कार्य है। किसी कार्यों से प्रशास समा के कोई-कोई कार्य सात्र हर प्रवास देगा कार्या है। प्रस्तु समक्ष सोता कार्या कार्यकाय (त्रका) सात्र कार्य के से जिल्ला है

सम्बोधे मही । दर्शे शहर ज़िन्दी भीतमें है जितने हैं। क्या सुनी में नदी । जित्सा नार्थिय की र हरवामीता कर ने ही है, क्लिम मोहब का तेना है होगा नहीं।

मारक्षाम्य विद्याः सरक्षात् चे कामान्यापूरणः वाम

